चन्दामामा
फ़रवरी १९९२
4 Rs.
Vapa

अपने प्यारे चहेते के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में—
आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु
—और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 105.00 वायु सेवा से रु. 216.00

फ्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 111.00 वायु सेवा से रु. 216.00

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

क्या जंगूरा शाका से अपने अपमान का बदला ले सका...?
शाका ने उसका कौन सा अपमान किया था जो वह उसकी जान लेना चाहता था....?
कौन थे वे सैलानी... और उनके द्वारा शहर से लाये गये वे पेशेवर हत्यारे....।
रहस्य और रोमांच के ताने बाने में बुनी जंगल की एक बेहद दिलचस्प कहानी...।
महाबली शाका का नया कारनामा।
शीघ्र प्रकाशित... पढ़ना न भूलिये
महाबली शाका और जालिम जंगूरा....

डायमण्ड कामिक्स (प्रा.) लिमिटेड
2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110 002

Don't you owe the
See my tail
It's out of a
Fairy Tale
Nice 'n' funny
I'm a Bunny
Foxy is my name
But I'm oh-so tame
Your Bear Hugs
are warmer
than mine

little one a cuddles?
I can't chase no mice But I'm soft 'n' nice
Give the Li'l Panda a Handa
No carrots to eat But I'm a treat
hug me tight
I'll give you
ride
CUDDLES
CHANDAMAMA TOYTRONIX

फरवरी १९९२

★

अगले पृष्ठों पर

संपादकीय ... ७

कोह्‌ल को नेहरू पुरस्कार ... ९

पंडित की पहचान ... ११

साहसी केशव ... १६

अपूर्व के पराक्रम ... १७

राजा का रसोइया ... २४

नियम-भंग ... २५

चिह्‌नशास्त्र ... ३२

चन्दामामा परिशिष्ट-३९ ... ३३

प्रेतों का डेरा ... ३७

कंजूसी महंगी पड़ी ... ४२

वीर हनुमान ... ४५

तीन प्रश्‍न ... ५३

सफेद हाथी ... ६०

प्रकृति:रूप अनेक ... ६३

फोटो परिचयोक्ति ... ६५

★

एक प्रति : ४ रुपये

वार्षिक चन्दा : ४८ रुपये

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

मुस्कराते रहने की तरकीब

यह कैसे संभव है कि हर कोई हर वक्त मुस्कराता रहे, खुश रहे । यह प्रश्न कुछ स्कूल के बच्चों ने उठाया था, और उन्हें जो उत्तर मिला, वह था: मेहनत करो, ईमानदार और निष्ठावान रहो, अपने देश से प्रेम करो और हमेशा अपने कर्तव्य का पालन करो ।

उत्तर देने वाले और कोई नहीं, भारत के राष्ट्रपति ही थे । उस समय उन्हें दिल्ली की एक पाठशाला के कुछ छात्र विशेष रूप से आयोजित एक प्रेस सम्मेलन में मिले थे । उस सम्मेलन की अध्यक्षता स्वयं श्री वेंकटारामन कर रहे थे ।

मेहनत करो । यह हर किसी पर लागू होता है । हर किसी को निर्धारित समय के लिए कम-से-कम मात्रा में कुछ न कुछ काम तो करना ही होगा । जब तक कड़ी मेहनत नहीं की जायेगी, न कोई प्रगति होगी, न कोई विकास ही होगा । हमारे सामने दो ज्वलंत उदाहरण हैं, जर्मनी और जापान के । दोनों ही देश दूसरे विश्व युद्ध के दौरान पूरी तरह नष्ट हो गये थे । लेकिन ये दोनों देश एक बार फिर चुनौती के रूप में खड़े हो गये हैं । इसका मुख्य कारण यही है कि यहां के लोगों ने कड़ी से कड़ी मेहनत की, ईमानदार और निष्ठावान रहे ।

अपने देश से प्यार करो । दरअसल, राष्ट्र का निर्माण लोग ही करते हैं और अगर लोग एक दूसरे से प्रेम करेंगे, एक-दूसरे के लिए अच्छे शब्दों का इस्तेमाल करेंगे, एक दूसरे की भावनाओं को समझेंगे, तो कभी किसी प्रकार की खुराफात नहीं होगी । सीधे-सीधे यह देशभक्ति है । अगर किसी देश के लोग एक-दूसरे के प्रति प्रेम का भाव रखते हैं तो दूसरे भी उनका सम्मान करेंगे ।

और अंत में, अपने कर्तव्य का पालन करो । हमारे धार्मिक ग्रंथ भी तो इसी पर बल देते हैं । वे तो एक कदम और आगे बढ़ जाते हैं । वे कहते हैं—अपना कर्म करो, लेकिन फल के प्रति किसी प्रकार की कोई इच्छा मत रखो । दरअसल, फल तो तुम्हारे लिए पहले ही तय रहता है । अगर ऐसा हो तो कर्तव्य का पालन करना बहुत आसान हो जाता है । तब हमेशा तुम्हारे भीतर एक प्रकार का संतोष रहेगा जिससे तुम्हारे दिल में हमेशा खुशी रहेगी और तुम्हारा चेहरा मुस्कराता रहेगा ।

वर्ष : ४४ फरवरी १९९२ अंक : ६

एक प्रति : रु. ४/- वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

सवाल बच्चों के भविष्य का ....

जीवन बीमा का कोई विकल्प नहीं

भारतीय जीवन बीमा निगम

खबरें संसार की

कोहल को नेहरू पुरस्कार

४४ वर्ष पहले भारत को आजादी की कीमत देश के बंटवारे के रूप में चुकानी पड़ी। अब भारत उस व्यक्ति का सम्मान करने जा रहा है जिसने विश्वयुद्ध के परिणाम स्वरूप ४६ वर्ष पहले विभाजित हुए एक देश को फिर से जोड़ने की कोशिश की और उसमें सफल भी रहा। ये देश थे, पश्चिमी जर्मनी और पूर्वी जर्मनी। और वह व्यक्ति था पश्चिमी जर्मनी का चांसलर डॉ. हैल्मुट कोह्ल जिसने शांतिपूर्ण और लोकतांत्रिक ढंग से जर्मनी का एकीकरण किया। हाल ही में उसे वर्ष १९९० के 'अंतर्राष्ट्रीय समझौते के लिए जवाहरलाल नेहरू पुरस्कार' के लिए चुना गया है। इस पुरस्कार की घोषणा नेहरू जयंती के अवसर पर १५ नवंबर को की गयी थी। १९८९ का पुरस्कार ज़िंबावे के राष्ट्रपति श्री रावर्ट मुगाबे को जातीय भेदभाव खत्म करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए दिया गया था। यह भेदभाव इधर अब तक भी दक्षिणी अफ्रीका में चल रहा था।

जर्मनी, अंतिम सम्राट् कैसर विल्हैल्म-II के राज्यकाल में और बाद में तानाशाह अडॉल्फ हिटलर की तानाशाही के काल में एक ही था। फिर नाज़ी जर्मनी ने सितंबर १९३९ में पोलैंड पर हमला कर दिया जिसके परिणामस्वरूप विश्व युद्ध [१९३९-१९४५] शुरू हो गया। जब हिटलर को लगा कि जर्मनी की हार निश्चित है तो उसने आत्महत्या कर ली। जर्मनी के समर्पण के बाद अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस और सोवियत रूस की सेनाओं ने उसे चार भागों में बांट दिया। उस समय उन्हीं का जर्मनी पर कब्ज़ा था। १९४९ में पूर्वी भाग एक स्वतंत्र राज्य बन गया और इसे जर्मनी लोकतांत्रिक गणराज्य या पूर्वी जर्मनी का नाम दिया गया। उसी वर्ष जर्मनी संघीय गणतंत्र या पश्चिमी जर्मनी भी अस्तित्व में आया, हालांकि उसे पूर्ण संप्रभुता १९५४ में प्राप्त हुई। पूर्वी जर्मनी की राजधानी पूर्वी बर्लिन और पश्चिमी जर्मनी की बोन था। १९५३ में पूर्वी बर्लिन के दंगे हुए जिन्हें सोवियत सेनाओं ने दबा दिया। इसके बाद ही बर्लिन दीवार खड़ी कर दी गयी और राजधानी को पश्चिमी बर्लिन

से अलग कर दिया गया। इसके पीछे जो उद्देश्य था, वह था पूर्वी बर्लिन के लोगों को भाग कर पश्चिमी बर्लिन में जाने से रोकना, क्योंकि उस समय पश्चिमी बर्लिन में दूसरी तरह की राजनैतिक पद्धति लागू थी।

१९७३ में दोनों जर्मनियों के बीच आपसी संबंध सामान्य हो गये। १९७६ में एरिक हॉनेकर, जो कि एक कम्यूनिस्ट राजनेता थे, पूर्वी जर्मनी के प्रमुख के रूप में नियुक्त हुए। हालांकि पूर्वी जर्मनी सोवियत रूस के गुट में बना रहा, एरिक हॉनेकर ने दोनों जर्मनियों के बीच मैत्री की वकालत की और वह पहली बार १९८७ में पश्चिमी जर्मनी गये। उस समय वहां डॉ. हैल्मुट कोह्ल चांसलर थे।

१२-राष्ट्रीय यूरोपीय परिषद् ने अपना शिखर सम्मेलन अप्रैल, १९९० में किया। वहां डॉक्टर कोह्ल को संकेत मिला कि वह दोनों जर्मनियों के शांतिपूर्ण एकीकरण की व्यवस्था करें। तब से डॉ. कोह्ल समूचे यूरोपीय परिदृश्य पर एक महामानव की तरह छाये रहे। ३ अक्तूबर, १९९० को दोनों जर्मनी मिलकर एक हो गये और एक राष्ट्र बन गये। इस प्रतिक्रिया की शुरुआत वर्ष के आरंभ में बर्लिन दीवार को तोड़कर हुई। समूचे जर्मनी की आबादी अब लगभग ८ करोड़ है। अर्थव्यवस्था भी अब एक जैसी है। यानी, एकीकृत जर्मनी संसार की एक विशाल शक्ति बनने की संभावना लिये हुए है। दिसंबर, १९९० में जो चुनाव हुए, उनमें डॉ. कोह्ल को फिर से चांसलर चुना गया। एक भेंट-वार्ता के दौरान उन्होंने एक बार कहा था कि उन्हें गांधी जी की दृष्टि और पंडित नेहरू 'जिन्होंने ऐसी विश्व-व्यवस्था की कल्पना की थी जिसमें न कोई तकरार हो और न ही कोई गुटबाज़ी' से प्रेरणा ली थी। नेहरू पुरस्कार के निर्णायक मंडल ने जर्मनी के एकीकरण को एक ऐसी घटना बताया है जिससे यूरोप के इतिहास में एक नये युग का श्रीगणेश हुआ है।

पंडित की पहचान

विमलपुरी के राजा विवेकवर्मा को साहित्य से बहुत लगाव था। उनका विश्वास था कि यह सरस्वती का विशेष वरदान है और उसकी कृपा के बिना कोई विद्वत्ता प्राप्त नहीं कर सकता। इसीलिए उनके यहां जो साहित्यकार या पंडित उनसे मिलने आते, वह उनका भरपूर सत्कार करते। उनके यहां श्रीमुख नाम का एक कवि-पंडित था। वह उनका दरबारी पंडित भी था।

उधर राजा का एक मंत्री था बुद्धिप्रिय। बुद्धिप्रिय पंडितों के प्रति कोई अच्छा विचार नहीं रखता था। उसकी मान्यता थी कि धन के सामने विद्वत्ता का कोई महत्व नहीं रहता।

एक दिन बुद्धिप्रिय और राजा विवेकवर्मा के बीच यों ही बातों का सिलसिला चल पड़ा।

राजा विवेकवर्मा बोले, "महामंत्री, श्रीमुख की विद्वत्ता के सामने मुझे ऐसा लगने लगता है जैसे कि मेरा समूचा वैभव फीका पड़ गया हो"।

बुद्धिप्रिय राजा की बात सुनकर हंस पड़ा। वह बोला, "मेरी धृष्टता क्षमा करें, महाराज। मैं आपके विचारों से सहमत नहीं हूं। धन के सामने साहित्य या पांडित्य एकदम कुछ भी नहीं। पांडित्य के बिना तो व्यक्ति का गुज़ारा चल सकता है, लेकिन धन के बिना यह संभव नहीं। यदि आप श्रीमुख के लिए धन की व्यवस्था न करें, तो बताइए, इतना बड़ा पंडित होने पर भी उसका गुजारा कैसे होगा और उसका पांडित्य किस काम आयेगा?"

राजा विवेकवर्मा को बुद्धिप्रिय का यह तर्क पसंद नहीं आया। वह बोले, "लगता है आपको विद्वत्ता के प्रति कोई विद्वेष है। यदि

अनिल चौहान

आप साहित्य में थोड़ी सी भी रुचि रखते तो आप ऐसा न कहते ।"

ऐसे ही कुछ दिन बीत गये । एक दिन राजा विवेकवर्मा और मंत्री बुद्धिप्रिय गुरुकुल में गये । उस गुरुकुल को माधवानंद नाम के एक आचार्य चला रहे थे । राज्य में और भी कई गुरुकुल थे, लेकिन आचार्य माधवानंद के गुरुकुल के छात्र काफी प्रखर और प्रतिभा-संपन्न माने जाते थे ।

जब राजा विवेकवर्मा और आचार्य माधवानंद एक दूसरे के सामने आये तो राजा विवेकवर्मा बोले, "आचार्य, आपके यहां जो विद्यार्थी हैं, उनकी ख्याति चारों ओर है । हर कोई उन्हें प्रज्ञावान कहता है । मैं उसका कारण जानना चाहता हूं । क्या उसे आप बताने का कष्ट करेंगे?"

आचार्य माधवानंद थोड़ा-सा मुस्कराये । फिर कहने लगे, "राजन्, गुरुकुल की शिक्षा पूरी होने के बाद मैं अपने हर छात्र को श्रीमुख-रचित काव्य पढ़ने को देता हूं । जो छात्र उसमें कोई त्रुटि निकाल पाता है, उसी को मैं योग्यता-पत्र देता हूं ।"

आचार्य की बात सुनकर राजा विवेकवर्मा को गुस्सा आ गया । वह बोले, "वाह, खूब! आप हमारे दरबारी पंडित के काव्य में त्रुटियां खोजने का काम करते हैं? यह तो हमारा बहुत बड़ा अपमान है ।"

राजा की बात सुनकर आचार्य माधवानंद ने बड़ी विनम्रता से कहा, "राजन्, महाकवि श्रीमुख के काव्य में त्रुटि पकड़ पाना किसी साधरण विद्वान के बस का नहीं । इसके लिए अपार पांडित्य दरकार है । हमारे छात्रों के पांडित्य की कसौटी आपके दरबारी पंडित का काव्य ही है । इससे आपकी गरिमा ही बढ़ती है । फिर इस में अपमान का प्रश्न कहां उठता है?"

आचायर्य माधवानंद के तर्क से राजा विवेकवर्मा कुछ शांत हुए । फिर बोले, "ठीक है, आज तक आपके गुरुकुल से कितने छात्रों को योग्यता-पत्र प्राप्त हुए हैं?"

"क्या कहूं, महाराज ।" आचार्य माधवानंद ने उत्तर दिया, "पिछले वर्ष तक केवल एक-दो छात्र ही साल भर में योग्यता प्राप्त कर सके थे । लेकिन इस वर्ष पंद्रह छात्रों को योग्यता-पत्र दिये गये । मेरे लिए

चिंता की बात यह है कि इस वर्ष योग्यता-पत्र प्राप्त करने वाले ये छात्र सामान्य बुद्धि के हैं। इस बात को लेकर मुझे बहुत हैरानी भी हो रही है।"

"महाकवि श्रीमुख के काव्य में त्रुटियां निकालने वाले छात्र सामान्य बुद्धि के कैसे हो सकते हैं? इस बात पर मुझे स्वयं को आश्चर्य हो रहा है।" राजा विवेकवर्मा ने कहा।

अब तक मंत्री बुद्धिप्रिय मौन था। अब उससे रहा नहीं गया। वह बोला, "इसमें आश्चर्य की क्या बात है महाराज। आप शुरू से ही आचार्य माधवानंद के छात्रों को अधिक महत्व देते रहे हैं। इसलिए संभव है कि कोई महापंडित श्रीमुख के काव्य में त्रुटियां ढूंढ़-ढूंढ कर उन्हें माधवानंद के छात्रों तक किसी लाभ के लिए पहुंचा रहा हो।"

मंत्री बुद्धिप्रिय की व्यावहारिक बुद्धि पर राजा विवेकवर्मा को चकित रह जाना पड़ा।

वापस राजधानी पहुंच कर राजा ने अपने गुप्तचरों को बुलवाया और उन्हें आदेश दिया कि वे उस महापंडित का पता लगायें जो इस धंधे में लगा हुआ है।

गुप्तचरों ने एक ही सप्ताह के भीतर उस पंडित का पता लगा लिया। दूसरे शब्दों में मंत्री बुद्धिप्रिय का संदेह सच निकला।

राजधानी के निकट ही रामपुर गांव में विष्णुशर्मा नाम का एक पंडित रहता था जो श्रीमुख के काव्य में त्रुटियां खोजने में व्यस्त रहता। त्रुटियां निकाल लेता तो उन्हें कुछ दाम लेकर आचार्य माधवानंद के छात्रों तक पहुंचा देता।

के सामने आपके दरबारी पंडित श्रीमुख की पोल खुल जाती। शायद यह श्रीमुख का ही षड्यंत्र था कि मैं आपके दर्शन नहीं कर पाया। अब आप जान ही गये होंगे कि मैं कितनी सहजता से श्रीमुख के काव्य में त्रुटियां पकड़ लेता हूं। निस्संदेह, मेरा पांडित्य उसके पांडित्य से कहीं बढ़कर है। आप प्रतिभाहीन छात्रों को योग्यता-पत्र मिलने पर दुखी हो रहे हैं, लेकिन प्रतिभा-संपन्न होकर भी मैं अपना पेट भरने में सक्षम नहीं हूं। इसीलिए मैं भी दुखी हूं। जब मेरे लिए धन प्राप्त करने का और कोई उपाय नहीं रहा तो मुझे यही रास्ता अपनाना पड़ा। इससे मुझे कोई अपराध-बोध नहीं हो रहा।"

पंडित विष्णुशर्मा के बारे में सूचना पाकर राजा विवेकवर्मा स्वयं उससे मिलने गये और उससे बोले, "पंडित श्रेष्ठ, आप जैसे विद्वान को क्या यह शोभा देता है कि प्रतिभाहीन छात्र परीक्षा में सफल होकर योग्यता-पत्र प्राप्त करते रहें? आप इस तरह अपनी विद्वत्ता का दुरुपयोग कर रहे हैं।"

राजा विवेकवर्मा को एकाएक अपने सामने पाकर पंडित विष्णुशर्मा हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला, "प्रभु, मुझे चलिए इसी बहाने इतने समय बाद आपके दर्शन तो प्राप्त हुए। पिछले दिनों मैंने कई बार कोशिश की कि मैं किसी तरह आप तक पहुंच सकूं, लेकिन कोई रास्ता नहीं निकला। आपसे यदि मैं भेंट कर पाता तो शायद मेरे पांडित्य

पंडित विष्णुशर्मा की बात से राजा विवेकवर्मा को बहुत धक्का लगा। वह उसके यहां से सीधे अपनी राजधानी लौटे। मंत्री बुद्धिप्रिय उनके साथ ही था। उसे अपनी बात कहने का अवसर मिला। उसने कहा, "राजन्; आपने देख लिया न कि विद्वत्ता की तुलना में धन-संपदा कहीं श्रेष्ठ है। अब देख लीजिए कि लक्ष्मी की कृपा के लिए लोग सरस्वती को कैसे बेचते हैं।"

अपने मंत्री की बात पर राजा विवेकवर्मा हंसे बिना न रह सके। "यह ठीक नहीं, महामंत्री," वह बोले, "निस्संदेह, धन दैनिक जीवन के लिए आवश्यक है, लेकिन काव्य-प्रतिभा अपना स्थान रखती है। वह स्थान बहुत ऊंचा है। धन से इसकी तुलना

किसी प्रकार भी नहीं की जा सकती, और न ही करनी चाहिए। जब धन के लिए किसी विद्वान को अपनी विद्वत्ता का मोल पाप्त करना पड़ता है तो हमें उसका कारण जानना होगा कि हमने उसके गुज़ारे के लिए क्या व्यवस्था की। पँडित विष्णुशर्मा की इस दशा के लिए मैं ही दोषी हूं। इसमें उसका अपराध ज़रा भी नहीं। हां, यदि आपके विचार विद्वानों या कवि-पँडितों के बारे में अच्छे नहीं हैं, तो उसका कारण श्रीमुख जैसे स्वार्थी कवि-पँडित ही है।"

कुछ ही दिन बीते थे कि राजा विवेकवर्मा ने श्रीमुख को दरबारी पँडित के पद से हटा दिया और उसके स्थान पर विष्णुशर्मा को नियुक्त कर दिया। अब विष्णुशर्मा राजा से जब चाहता मिल सकता था।

एक दिन बातचीत के दौरान राजा विवेकवर्मा ने पँडित विष्णुशर्मा से कहा, "पँडित श्रेष्ठ, अब आप दरबारी पँडित हैं। अब आचार्य माधवानंद के गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्रों की विद्वत्ता आंकने के लिए आपके काव्य को ही प्रतिमान माना जाता है, अर्थात् उन छात्रों को योग्यता-पत्र इसी आधार पर प्राप्त होता है।"

पँडित विष्णुशर्मा का उत्तर संक्षिप्त था। उसने कहा, "नहीं प्रभु, नहीं, ऐसा न ही होता तो अच्छा है। न ही, आज तक जो मैं करता रहा, होना चाहिए। मजबूर होकर ही किसी पँडित को ऐसा करना पड़ता।"

इस पर राजा विवेकवर्मा ने आश्वासन देते हुए कहा, "स्थिति अब पहले जैसी नहीं। प्रतिभासंपन्न पँडित अब मुझ से दूर नहीं रखे जायेंगे, क्योंकि अब दरबारी पँडित श्रीमुख नहीं, विष्णुशर्मा है। आचार्य माधवानंद के लिए भी अब चकित होने की कोई बात नहीं, क्योंकि अयोग्य एवं प्रतिभाहीन छात्र गुरुकुल से योग्यता-पत्र प्राप्त नहीं कर सकेंगे।"

पर राजा विवेकवर्मा की उक्ति के प्रति पँडित विष्णुशर्मा ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। वह मौन रहा। उसने केवल अपना सर हिला दिया।

साहसी केशव

केशव देवगढ़ का रहने वाला था। एक बार उसे एक भयानक जंगल में हिंसक पशुओं के बीच रात बितानी पड़ी, और इसके बावजूद वह सुबह बिलकुल सही-सलामत घर लौट आया।

निस्संदेह, यह एक बड़ा साहसिक कार्य था। चारों ओर इसकी खबर फैल गयी और होते-होते यह खबर देवगढ़ के ज़मींदार तक भी पहुंची। सब का कहना था कि केशव को इस साहसिक कार्य के लिए ज़मींदार के हाथों पुरस्कार मिलना चाहिए।

आखिर, ज़मींदार ने उसे अपने यहां बुलवा भेजा। उस समय केशव घर पर नहीं था। संदेशवाहक ने ज़मींदार का संदेश केशव की पत्नी तक पहुंचा दिया। ज़मींदार का संदेश पाकर केशव की पत्नी एकदम चिढ़चिढ़ा उठी और बोली, "यह बात है! यह खबर ज़मींदार तक भी पहुंच गयी है! उस दिन उसने समूचे दिन की कमाई जुए में गंवा दी थी और मेरा सामना करने की उसमें हिम्मत न होने के कारण वह रात भर घर से गायब रहा और जंगल में रात काटकर अगली सुबह घर लौट आया। मैंने ही उसे कहा था कि वह घर तभी लौटेगा जब वह खोयी हुई कमाई पूरी करेगा। तुम ज़मींदार से कह दो कि पुरस्कार का हकदार वह नहीं, मैं हूं।"

संदेशवाहक लौट गया। केशव की पत्नी की बातें उसने ज़मींदार से बतायीं। उस पर ज़मींदार के होंठों पर मंद-मंद मुस्कान उभर आयी। वह बोला, "बेशक, यह पुरस्कार केशव की पत्नी को ही मिलना चाहिए। उसने ही उसे इतना साहसी बनाया।"

—कु. गोमती

अपूर्व के पराक्रम
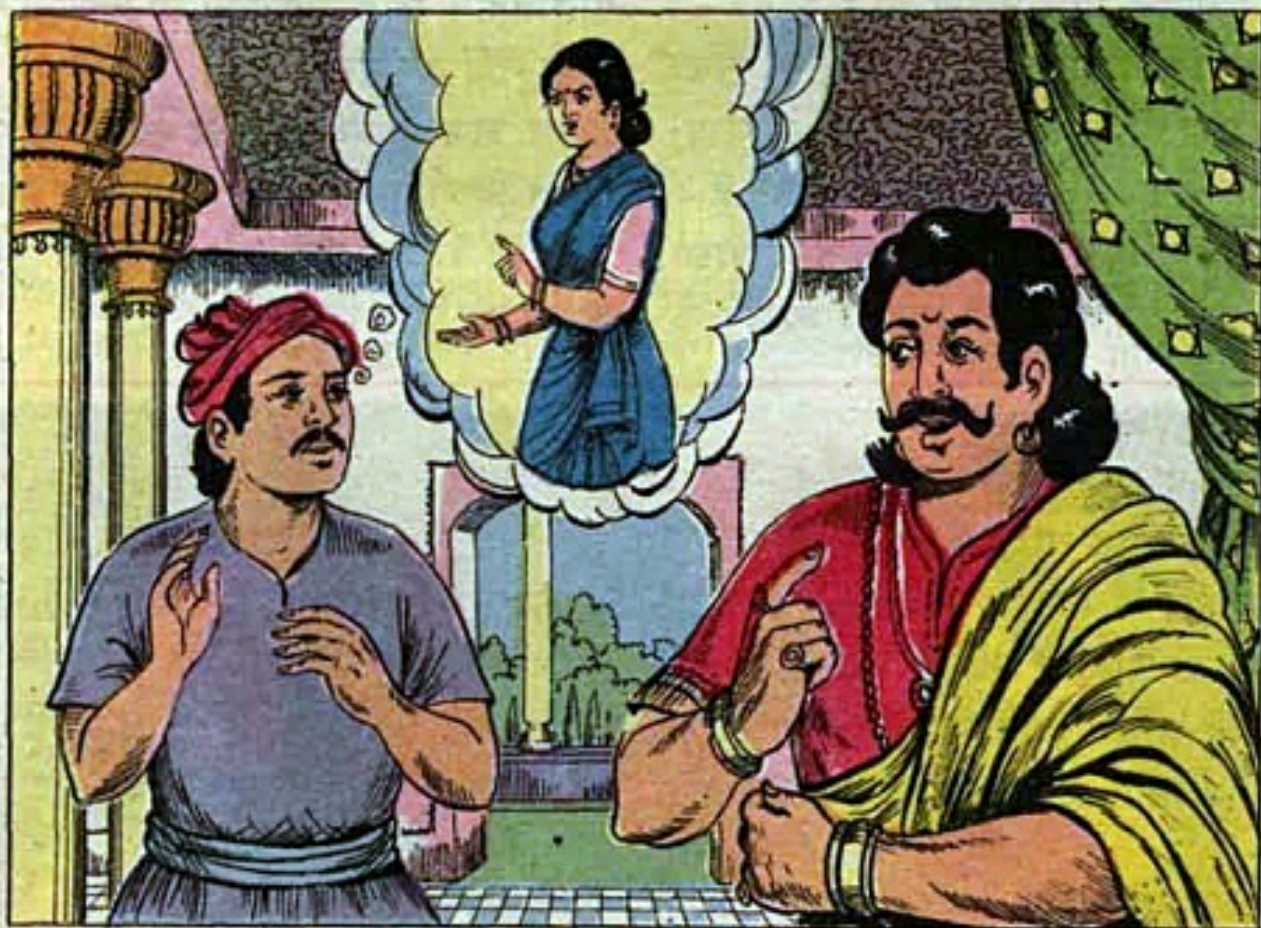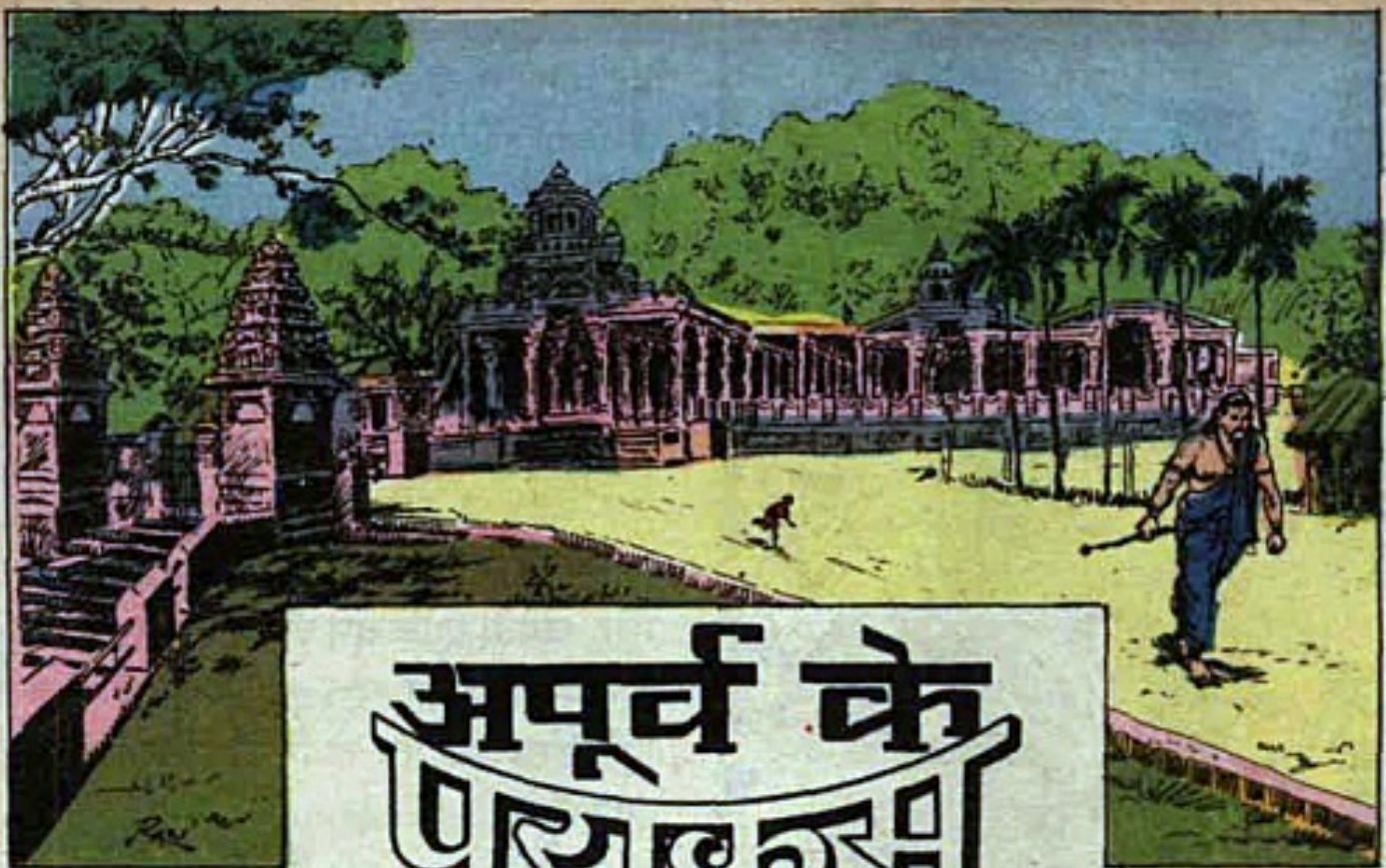
(११)

[अपूर्व, जिसका आविर्भाव हिमालय की चोटी पर रहने वाले एक योगी द्वारा किये गये यज्ञ में से हुआ था, अब युवा हो गया है। लेकिन कद-काठ में वह वैसे ही नन्हा सा है। उसे हाल ही में पता चला है कि एक दुष्ट तांत्रिक चंद्रप्रकाश नाम के हीरे को अपने कब्जे में लेने की योजना बना रहा है। यह हीरा अपनी ही तरह का है जिसे राजकुमारी पहने हुए है। हीरे को हथियाने में वह मुख्यमंत्री की सहायता भी ले रहा है। अब आगे पढ़ो।]

जिस समय तांत्रिक मुख्यमंत्री के निवास से बाहर आया, उस समय आधी रात हो चुकी थी। जब वह सड़क पर चल रहा था तो वह मुश्किल से ही देखा जा सकता था, क्योंकि वह काले रंग का चोगा पहने हुए था और उसके सर पर घने काले बाल थे। उसकी दाढ़ी भी काले रंग की थी जो उसके सीने तक पहुंच रही थी। रात की अँधियारी में वह बिलकुल नदारद था। ध्यान से देखने पर परछाईं की तरह ही वह दिखाई देता था। वह उस अँधियारी में खुद अंधकार सा मिल गया था और तेज चलता जा रहा था।

इस हीरे के साथ यह किस प्रकार के अनुष्ठान करना चाहता है? जो कुछ यह करने जा रहा है, इसके बारे में इसे ज्ञान कहां से प्राप्त हुआ? अपूर्व इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए उतावला हो रहा था। इस लिए वह चुपके-चुपके तांत्रिक के पीछे हो लिया।

अपूर्व के कदम इतने धीमे थे कि तांत्रिक को यह शक भी नहीं हो सकता था कि कोई उससे थोड़ी ही दूरी पर उसका पीछा कर रहा है।

लेकिन तांत्रिक ज़्यादा देर तक पैदल नहीं चला। जैसे ही वह शहर से बाहर हुआ, एक झाड़ी में से एक रीछ बाहर निकला और उसने चुपचाप अपने को तांत्रिक की सवारी के लिए पेश किया।

तांत्रिक उस रीछ की पीठ पर उछलकर बैठ गया और इस से रीछ समझ गया कि अब उसे चलना है। फौरन वह रीछ काफी तेजी से दौड़ने लगा।

अपूर्व के लिए उस दौड़ने वाले रीछ का पीछा करना मुश्किल नहीं लगा। क्योंकि वह भी तेज़ दौड़ सकता है। दौड़ना अपूर्व के लिए कोई समस्या नहीं था। इससे वह कभी नहीं थकता था। इसलिए वह भी रीछ के मुकाबले पर ही दौड़ा। दौड़ते-दौड़ते वे एक नदी पर पहुंच गये थे।

नदी पर पहुंच कर तांत्रिक रीछ की पीठ पर से उतर गया और बजाय इसके कि वह उस जीव के प्रति कोई कृतज्ञता दिखाता, उसने उसके कान उमेठे और बोला, "अरे मूर्ख, लगता है कि तुम दौड़ना भूल गये हो। अब भाग जाओ यहां से और चुड़ैल वाले उस बरगद के पेड़ के निकट जंगल में मेरा इंतजार करो।"

रीछ ने अपने मुंह से ज़ोर की आवाज की। फिर वह वापस मुड़ा और अंधेरे में ग़ायब हो गया।

अपूर्व को उस अबोध और मूक जीव पर बड़ी दया आयी। ऐसे जीवों को वह भी अपना वाहन बनाता रहा है, लेकिन उन्होंने हमेशा अपनी मर्ज़ी से, उसकी दिलोजान से सेवा की है।

तांत्रिक की बात ऐसी नहीं थी। उस दुष्ट तांत्रिक ने उस रीछ को अपने मंत्रों से बांधा हुआ था औरे उसे खूब यातना देता था।

अपूर्व अब तांत्रिक की अगली चाल जानने को उत्सुक हो रहा था। उसने देखा कि तांत्रिक नदी के और निकट हो गया है। फिर उस तांत्रिक ने तीन बार अपने हाथों से ताली बजायी और कुछ उलटे-सीधे मंत्रों का उच्चारण किया।
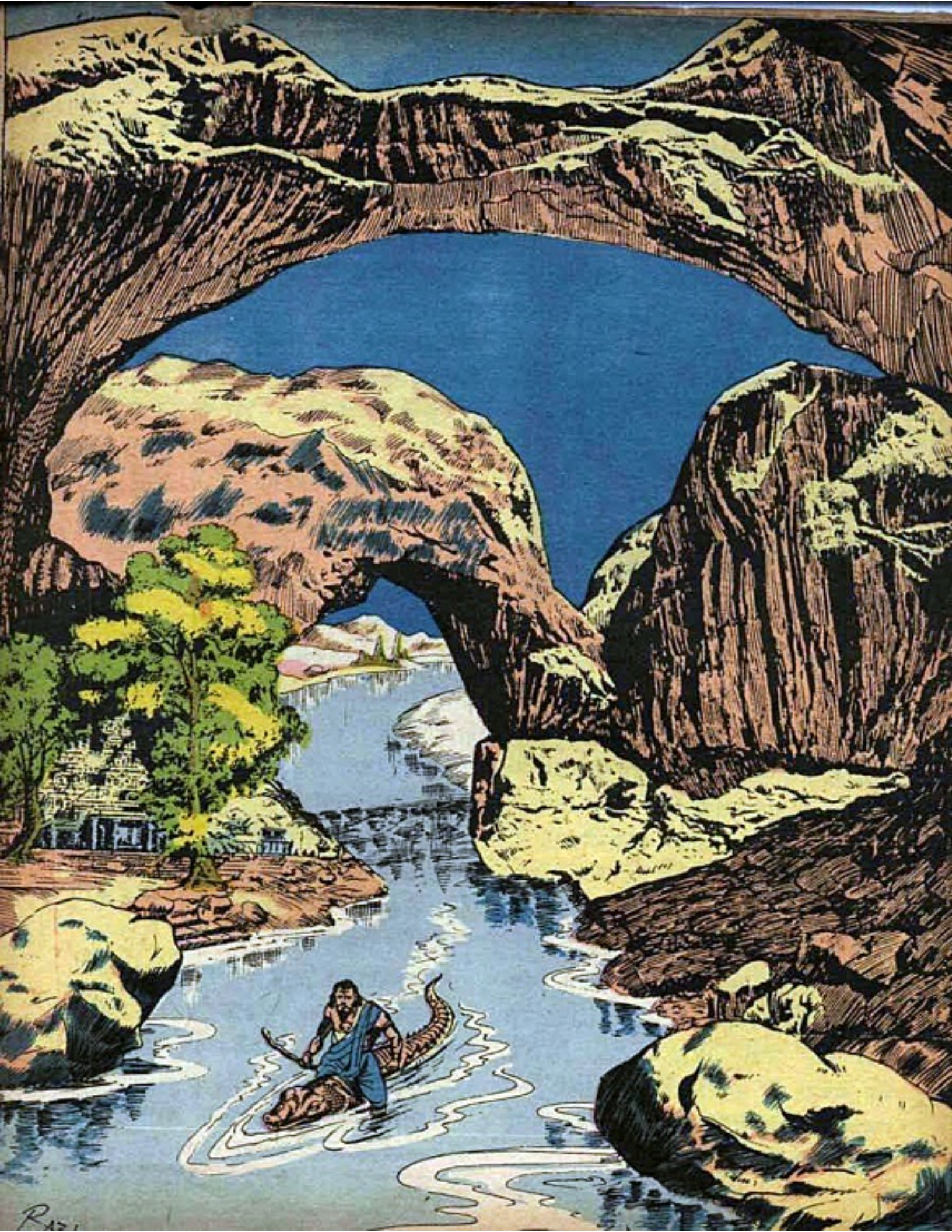
जैसे ही उस तांत्रिक ने उन उलटे-सीधे और अजीब मंत्रों का उच्चारण किया, वैसे ही पानी में ऊंचे-ऊंचे छींटे उठने लगे। अपूर्व को तब नदी की सतह पर कुछ हलके नीले रंग के एक जोड़ी बिंदु नज़र आये। वे रात में चमक रहे थे जैसे वहां कोई प्राणी था। वह समझ गया कि यह एक बहुत बड़ा मगरमच्छ है।

मगरमच्छ तट के निकट आया और मुस्कराते हुए वह तांत्रिक कूद कर उसकी पीठ पर जा बैठा। "जितनी तेज़ तैर सकते हो, तैरो!" उसने मगरमच्छ को आदेश दिया। फिर वह मगरमच्छ की पीठ के दोनों तरफ अपनी टांगें फैलाये बैठा था।

और वाकई मगरमच्छ निहायत तेज़ गति से तैरने लगा। अपूर्व नदी के तट के साथ-साथ तेज जानेवाले उस मगरमच्छ के बराबर दौड़ता था।

आकाश में चंद्रमा एक फांक के समान दिख रहा था। नदी के दोनों तरफ घनी झाड़ियां थीं जिनमें गीदड़ और लक्कड़बग्घे अपनी-अपनी तरह की आवाज़ें कर रहे थे। एक-दो बार शेर भी दहाड़ा। लेकिन अपूर्व को इन से डर कैसे होगा? वास्तव में अपनी जिंदगी भर में अपूर्व ने कभी भय नाम की चीज़ जानी ही न थी।

लेकिन उस समय अपूर्व के सामने एक समस्या आ खड़ी हुई, जब नदी की धारा पहाड़ियों के बीच एक प्रपात के रूप में दाखिल हुई। दरअसल, यह एक अँधियारी सुरंग थी और मगरमच्छ बड़ी आसानी से उसमें जा घुसा था। अगर अपूर्व तट के साथ-साथ ही दौड़ता रहता तो तांत्रिक का कभी पीछा नहीं कर सकता था।

वक्त हाथ से निकला जा रहा था, इसलिए उसने फौरन एक निर्णय किया और झट उसने पानी में छलागं लगा दी और मगरमच्छ के पीछे-पीछे तैरने लगा।

मगरमच्छ एक बहुत बड़ी गुफा के सामने पहुंच कर रुक गया। तांत्रिक ने उसी क्षण एक लंबी छलांग लगायी और वह एक चट्टान पर जा पहुंचा।

"कौन है वहां?" अचानक वहां अपूर्व को एक आवाज सुनाई पड़ी।

यह प्रश्न गुफा के भीतर से आया था। अपूर्व ने इससे पहले ऐसी महीन, भुतवा-सी आवाज कभी नहीं सुनी थी। यह आवाज़ बड़ी भयावैनी थी और स्पष्ट ही था कि यह किसी बूढ़ी औरत की थी।

"मैं वीरविकट हूं, तुम्हारा दासानुदास। क्या मुझे भीतर आने की आज्ञा है?" उस तांत्रिक ने पूछा।

"तुम आ सकते हो। लेकिन तुम्हारे साथ और कौन है?" उस ने प्रश्न किया।

"सिर्फ मगरमच्छ है। और कोई नहीं।" वीरविकट ने कहा।

"अपने चारों तरफ ध्यान से देखो, मूर्ख कहीं के।" आवाज फिर आयी।

वीरविकट नाम के उस तांत्रिक ने अपनी दृष्टि गड़ाकर चारों ओर देखा और यह जानने की कोशिश की कि सुरंग में कहीं कोई और प्राणी तो नहीं चला आया। लेकिन उसे कोई दीख नहीं पड़ा।

अपूर्व समझ गया कि यह जो विचित्र औरत गुफा के भीतर है, उसके पास किसी की उपस्थिति को सूंघ लेने की अद्भुत क्षमता है। उसने अपने गुरु द्वारा सिखाये गये एक श्लोक का जाप किया। श्लोक का जाप करना था कि उसकी उपस्थिति अन्य लोगों के ज्ञान से परे हो गयी।

"नहीं देवी, यहां चारों ओर मेरे सिवा और कोई नहीं," वीरविकट ने उसे आश्वस्त किया।

"ठीक है। आ जाओ।" आवाज आयी।

वीर विकट गुफा में दाखिल हो गया। अपूर्व एक दूसरी चट्टान पर चढ़ गया और वहां से धीरे-धीरे डायन की गुफा की ओर बढ़ने लगा। क्योंकि चट्टानें फिसलती थीं, इसलिए कभी उसे झुककर और कभी रेंग कर भी चलना पड़ता था।

गुफा में कोई अजीब चीज़ जल रही थी, जिससे वहां पीली-पीली रोशनी फैल रही थी। जिस बरतन में उस चीज़ को जलाया जा रहा था, वह इंसानी खोपड़ी थी। डायन अपनी टांगें फैलांये दीवार के सहारे बैठी थी। किसी को भी उसकी उम्र का अंदाज़ा नहीं हो सकता था। वह तीन सौ वर्ष की भी हो सकती थी। उस की शक्ल से ऐसा ही आभास हो रहा था।

डायन ने प्रश्न किया ।

वीरविकट उसकी ओर देखता रहा । डायन ज़ोर-ज़ोर से हंसने लगी । जब वह हंस रही थी तो ऐसा लगता था जैसे टीन के ढोल में किसी पटाखे को छोड़ा गया हो ।

"मैं समझ नहीं पा रहा, ऐ देवी । क्या तुम चाहती हो कि मैं हीरे के अलावा किसी और चीज़ को भी हथियाऊं?" वीरविकट ने आखिर पूछ ही डाला ।

"मैंने तुम्हें मूर्ख क्या यूं ही कहा था? मुझे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं । मुझे तुम्हारे हीरे की भी ज़रूरत नहीं । समझे?" डायन ने तांत्रिक को फटकारा ।

"नहीं, नहीं, मैं जानता हूं," वीरविकट ने अपनी सहमति जताते हुए कहा । "तुम मेरी खातिर ही मुझे हीरा दिलवाने में मदद कर रही हो । यह तुम्हारी दयालुता है ।"

"नहीं, तुम मूर्ख के मूर्ख ही रहे । साथ में तुम दोगले भी हो । मैंने कभी किसी पर किसी किस्म की दयालुता नहीं दिखायी । तुम यह अच्छी तरह जानते भी हो । मुझे मामूली शक्ति की कोई इच्छा नहीं । मैं राजा-वाजा बनना भी नहीं चाहती । मैं जानती हूं राजा बनने के लिए तुम्हारे प्राण निकल रहे हैं । खैर, इसमें कोई हर्ज़ भी नहीं कि मैं तुम्हारी इसके लिए मदद करूं, क्योंकि मैं इसका रहस्य जानती हूं । देखो, किसी रहस्य को जानना या कुछ हासिल करने की क्षमता रखते हुए भी उस क्षमता का इस्तेमाल न करना बहुत मुश्किल काम है ।

उसका शरीर बिलकुल कंकाल था, लेकिन उस कंकाल पर की खाल एकदम दमक रही थी । उसकी आंखें किसी गहरे गड्ढे की तरह दिख रही थीं और बेहद लाल थीं । उसकी उंगलियों के नाखुन सर्पों की तरह बल खाये हुए थे ।

"अब क्या है? कुछ आगे बढ़ पाये?" डायन ने तांत्रिक से प्रश्न किया ।

तांत्रिक उसके सामने पहले एकदम दांडवत हो गया और फिर खड़े होकर बोला, "हां, हम काफी आगे बढ़े हैं । वह हीरा अब राजकुमारी के पास है और मुझे उम्मीद है कि बहुत जल्द ही वह मेरे हाथ लग जायेगा ।"

"सिर्फ हीरा ही तुम्हारे हाथ लगेगा?"

इसीलिए मैं तुम्हारी मदद कर रही हूं कि तुम राजाओं के राजा, यानी संसार के सम्राट् बनो।"

"धन्यवाद, देवी।" वीरविकट बोला।

"केवल धन्यवाद से ही काम नहीं चलेगा, तुम्हें मेरी मदद की कीमत चुकानी होगी।" डायन बोली।

"क्या मैं तुम्हारी कोई इच्छा जान सकता हूं, ऐ देवी?" तांत्रिक ने पूछा।

"मेरी केवल एक ही इच्छा है। मुझे मेरा यौवन वापस मिलना चाहिए। मुझे केवल हीरा ही दरकार नहीं, बल्कि हीरे के साथ राजकुमारी भी दरकार है। मैं उसका यौवन अपने अंगों में उतार लूंगी।" डायन बोली और फिर हंसने लगी।

डायन की बात सुनकर बहादुर अपूर्व भी एक बार सर से पांव तक दहल गया।

"लेकिन तुमने उससे पहले भी तो दूसरी युवतियों को लेकर ऐसी ही कोशिश की थी। उनकी बलि भी चढ़ी, लेकिन तुम वैसी की वैसी, मेरा मतलब है, उतनी जवान नहीं हो सकी।"

"अरे मूर्ख, मेरा प्रयोग तब असफल रहा था। बस, इतना ही। लेकिन प्रयोग करके ही सीखा जाता है। अब राजकुमारी को लेकर मैं असफल नहीं रहूंगी। मैं जो अनुष्ठान करना चाहती हूं, राजकुमारी उसके लिए सभी शर्तें पूरी करती है। मैं उसका यौवन चूस कर अपने भीतर ले लूंगी। हा! हा! हा! क्या मजा रहेगा जब मैं एक बार फिर जवान हो जाऊंगी, वीरविकट, क्या तुम सोच सकते हो कि मैं कितनी सुंदर लगूंगी?" डायन ने फिर प्रश्न किया और हंसने लगी।

"तुम जैसी हो, ऐसे भी सुदंर लग रही हो।" वीरविकट ने कहा

"बकवास बंद करो, दोगले कहीं के! चापलूस! जैसा मैं कहती हूं, वैसा ही करो, नहीं तो यहां से दफा हो जाओ!" डायन ने चीख कर कहा।

राजा का रसोइया

राजा सिंहकेतु का एक रसोइया था जिसका नाम शिब्बू था। एक बार रानी का छोटा भाई आया तो रानी ने शिब्बू से कहा कि वह भोजन उसके भाई के लिए भी तैयार कर दे। लेकिन शिब्बू ने सरासर इनकार कर दिया। उससे रानी आग-बबूला हो गयी, और उसने सिपाहियों को बुलवाकर शिब्बू के हाथ-पांव बंधवा दिये। फिर उसे राजा के सामने पेश करने के लिए कहा गया।

शिब्बू को देख राजा ने वास्तविकता जाननी चाही और पूछा कि उसने रानी की बात क्यों नहीं मानी, तो शिब्बू बोला, "प्रभु! मैं केवल आपका रसोइया हूं, और यह बात सब जानते हैं।"

शिब्बू की बात सुनकर राजा को अपने ऊपर बहुत गर्व हुआ। उसने शिब्बू की ओर मोतियों की एक माला पुरस्कार के रूप में बढ़ा दी। फिर उसके स्वाभिमान को हवा देने के इरादे से राजा ने फिर कहा, "मैं तुम्हें एक सौ अशरफियां दूंगा। तुम रानी के भाई के लिए भी भोजन तैयार करो।"

शिब्बू ने तुरंत हामी भर दी और बोला, "जैसी आपकी आज्ञा, प्रभु!"

शिब्बू की बात सुनकर राजा चौंक गया और बोला, "अभी-अभी तुमने कहा था कि तुम केवल मेरे लिए ही भोजन तैयार करोगे, लेकिन एक सौ अशरफियां पाकर तुम किसी और के लिए भी भोजन तैयार करने को राज़ी हो गये हो। यह सब क्या है?"

शिब्बू का उत्तर इस प्रकार था, "क्या इस में कोई गलती है, प्रभु? राजा के रसोइए की हैसियत से मैंने रानी के भाई के लिए भोजन बनाने से इनकार किया है। अब मुझे आप आदेश दे रहे हैं और आपका आदेश मैं हर कीमत पर मानूंगा। मुझसे यह सहन नहीं होगा कि कोई यह कहे कि मैंने आपके आदेश को ठुकरा दिया। आपके सम्मान को मैं किसी प्रकार भी ठेस पहुंचते नहीं देख सकता।"

रसोइये का तर्क सुनकर राजा सिंहकेतु बहुत प्रसन्न हुआ और उसे एक सौ अशरफियां और पुरस्कार स्वरूप दीं।

—जय जगदीश
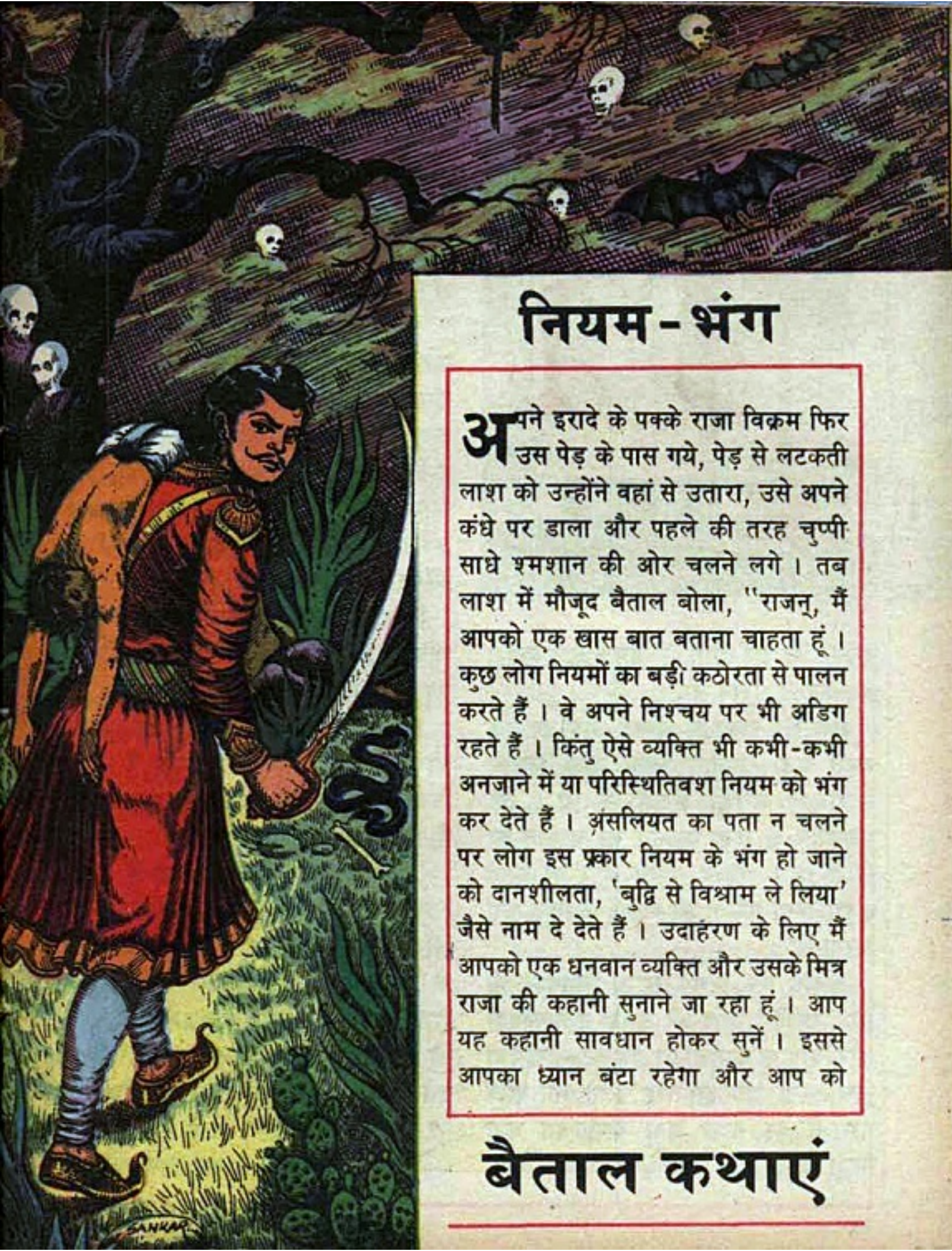
नियम - भंग

अपने इरादे के पक्के राजा विक्रम फिर उस पेड़ के पास गये, पेड़ से लटकती लाश को उन्होंने वहां से उतारा, उसे अपने कंधे पर डाला और पहले की तरह चुप्पी साधे श्मशान की ओर चलने लगे। तब लाश में मौजूद बैताल बोला, "राजन्, मैं आपको एक खास बात बताना चाहता हूं। कुछ लोग नियमों का बड़ी कठोरता से पालन करते हैं। वे अपने निश्चय पर भी अडिग रहते हैं। किंतु ऐसे व्यक्ति भी कभी-कभी अनजाने में या परिस्थितिवश नियम को भंग कर देते हैं। असलियत का पता न चलने पर लोग इस प्रकार नियम के भंग हो जाने को दानशीलता, 'बुद्धि से विश्राम ले लिया' जैसे नाम दे देते हैं। उदाहरण के लिए मैं आपको एक धनवान व्यक्ति और उसके मित्र राजा की कहानी सुनाने जा रहा हूं। आप यह कहानी सावधान होकर सुनें। इससे आपका ध्यान बंटा रहेगा और आप को

बैताल कथाएं

थकान भी नहीं होगी ।" इसके बाद बैताल वह कहानी सुनाने लगा:

स्वर्णदीप राज्य में श्रीचंद्र नाम का एक बहुत बड़ा धनवान रहता था। उसका कारोबार करोड़ों-अरबों में था। वह स्वर्णदीप के राजा जयसेन का बचपन का दोस्त था। श्रीचंद्र अपनी आय का बहुत बड़ा हिस्सा गरीबों की भलाई के लिए खर्च करता था।

श्रीचंद्र एक अच्छा-खासा चित्रकार भी था। प्राचीन काल की अनेक कलाकृतियों और विशिष्ट वस्तुओं पर वह ढेर-सारा पैसा खर्च करता, और इस तरह उसने एसी अपूर्व वस्तुओं का बहुत बड़ा सग्रंहालय बना लिया था।

एक दिन श्रीचंद्र के यहां शिवदत्त नाम का युवक आया। वह फटे-पुराने कपड़ों में था। फिर भी उसके चेहरे पर एक विशेष प्रकार की चमक थी। श्रीचंद्र उससे प्रभावित हुआ और उसे पूरे सम्मान के साथ उसने अपने यहां आसन दिया।

"महोदय, मेरा नाम शिवदत्त है। मैं एक ज़मींदार परिवार से हूं। लेकिन फिलहाल कंगाल हूं। मुझे पता चला कि आप पुरानी वस्तुओं का संग्रह तैयार कर रहे हैं। मैं चाहता हूं कि आप इस चित्र को अपने पास रख लें और मुझे इसके उचित दाम देकर रुखसत करें।" यह कहकर शिवदत्त ने वह चित्र श्रीचंद्र के सामने खड़ा कर दिया।

चित्र को देखकर श्रीचंद्र पल भर के लिए चकित रह गया। उस चित्र में मां और बच्चे का एक ममता-भरा दृश्य था।

श्रीचंद्र ने शिवदत्त से कहा, "यह चित्र कोरी कल्पना पर आधारित नहीं है। मेरे विचार से यह सजीव व्यक्तियों पर आधारित है, क्या तुम इससे सहमत हो?"

"आप बिलकुल ठीक कह रहे हैं। इस चित्र में मातृरूप में मेरी मां है और वह बच्चा और कोई नहीं, मैं ही हूं। सुना है इस चित्र के कलाकार की कला से खुश होकर मेरे पिता ने उसे एक सौ एकड़ ज़मीन दे डाली थी। अब हालात से मैं मजबूर हूं। इसीलिए इसे बेचना चाहता हूं।" शिवदत्त के चेहरे पर उदासी झलक आयी थी।

"चिंता मत करो, मैं इस चित्र को पूरी

सावधानी से अपने यहां रखूंगा । रहा इसकी कीमत का सवाल, उसके बारे में मैं कुछ नहीं कह सकता । हां, तुम्हें मैं अपने कोषागार में ले चलूंगा । तुम जितना भी धन वहां से ले सको, ले सकते हो ।" और इन शब्दों के साथ श्रीचंद्र ने शिवदत्त को अपने खज़ाने के पास ला खड़ा किया ।

शिवदत्त ने उस ख़ज़ाने में से केवल एक सौ अशरफियां ही लीं और बोला, "बस मेरे लिए इतनी ही काफी हैं । मैं इनसे अपना व्यापार शुरू करूंगा और ईश्वर की कृपा के लिए प्रार्थना करूंगा ।"

श्रीचंद्र हक्का-बक्का रह गया । बोला, "अरे, ऐसे अद्‌भुत चित्र के लिए केवल एक सौ अशरफियां ही ले रहे हो? कम से कम एक लाख तो लेते ।"

"नहीं, इससे ज़्यादा रकम मुझे दरकार नहीं । मेरे लिए यह एक लाख के बराबर है ।" और इतना कहकर शिवदत्त वहां से चला गया ।

श्रीचंद्र ने वह चित्र राजा जयसेन को दिखाया । राजा जयसेन उसे देखकर गद्‌गद हो गये । उन्होंने श्रीचंद्र से कहा, "ग़ज़ब का चित्र है यह । मैं इसे अपने अंतःपुर में रखना चाहूंगा । जो भी दाम तुम चाहो, ले सकते हो । यदि इसे बेचना नहीं चाहते तो कम से कम थोड़े दिनों के लिए हमारे यहां रहने दो । इसे देखकर मेरे मन को बड़ी शांति मिल रही है ।"

लेकिन श्रीचंद्र ने धीरे से कहा, "राजन्, आप भली-भांति जानते हैं कि जो वस्तु मैं एक बार अपने संग्रहालय में लाता हूं, उसे कभी बाहर नहीं जाने देता । यह मेरा नियम है । इसलिए आप मुझे क्षमा करें ।"

इस घटना को बीते कई वर्ष हो गये थे । एक दिन राजा जयसेन और श्रीचंद्र दोनों, श्रीचंद्र के यहां विश्राम-कक्ष में बैठे बातें कर रहे थे । उसी समय शिवदत्त वहां चला आया । वह अब बड़े ठाठ में था और खूब संपन्न दिख रहा था । श्रीचंद्र ने उसे बड़े स्नेह से अपने पास बिठाया और फिर राजा जयसेन को उसका परिचय देते हुए बोला, "यह शिवदत्त है, वही जिससे मैंने वह मां-बच्चे वाला अद्‌भुत चित्र खरीदा था ।" शिवदत्त ने स्वयं ही बताना शुरू किया,

लौटा दीजिए ।'' शिवदत्त ने कहा ।

शिवदत्त की ऐसी मांग सुनकर श्रीचंद्र दुविधा में पड़ गया । खरीदी हुई किसी कलावस्तु को लौटाना उसके नियम के विरुद्ध था । इस मामले में तो उसने राजा जयसेन का अनुरोध भी ठुकरा दिया था । वह चित्र अगर वह शिवदत्त को लौटा देता है तो राजा जयसेन उससे ज़रूर अप्रसन्न हो जायेंगे । उधर राजा जयसेन बड़ी उत्सुकता से श्रीचंद्र की ओर देख रहे थे ।

श्रीचंद्र स्थिति की नज़ाकत खूब समझ रहा था । वह शिवदत्त से बोला, ''जब मैं कोई सुंदर वस्तु खरीदता हूं तो उसे वापस नहीं बेचता । यह मेरे यहां का नियम है ।''

उत्तर सुनकर शिवदत्त निराश हो गया । पर उसने अपना अनुरोध जारी रखा । बड़ी विनम्रता से बोला, ''महोदय, हर नियम में कुछ न कुछ छूट होती है । बस, एक बार, केवल एक बार अपने इस नियम को भंग करके मुझे अपनी मां को स्पर्श करने का सौभाग्य दीजिए ।''

शिवदत्त की बात श्रीचंद्र के मन को कहीं छू गयी । थोड़ी देर तक वह कुछ सोचता रहा । फिर बोला, ''अच्छा शिवदत्त, तुम्हारी अपनी माता के प्रति ममता को देखते हुए मैं तुम्हें एक अवसर दे रहा हूं । मैं स्वयं एक चित्रकार हूं । मैं तुम्हारी मां के उस तैलचित्र की तरह का हूबहू एक और तैलचित्र बनाऊँगा । तुम्हें उन तैलचित्रों में से पहचानना होगा कि असली चित्र कौन सा

''महोदय, आपसे मैंने उस चित्र के बदले जो सौ अशरफियां लीं थीं, उनसे मैंने व्यापार शुरू किया, जिससे मुझे खूब लाभ हुआ । अब मैं लखपति हूं । मैं आपके प्रति आभार व्यक्त करने आया हूं । मैं आपसे कुछ मदद भी चाहता हूं ।''

''मदद? खैर, मैं तुम्हें हर प्रकार की मदद देने को तैयार हूं ।'' श्रीचंद्र बोला ।

''आपसे मैं धन की मदद नहीं चाहता । जब से मैंने आपको अपनी मां का वह चित्र बेचा है, मेरे मन की शांति मुझसे दूर चली गयी है । मैं आपसे हाथ बांधकर प्रार्थना करता हूं कि वह चित्र आप मुझे लौटा दें । मुझे उसके लिए जो भी दाम चुकाने पड़ेंगे, चुकाऊंगा । बस, मेरे मन की शांति को

है? अगर तुम उस तैलचित्र को पहचानने में सफल हो गये तो मैं तुम्हें वह चित्र लौटा दूंगा। इस परीक्षा में निर्णय महाराज के हाथ रहेगा।"

शिवदत्त ने श्रीचंद्र की यह शर्त मान ली और स्वीकृति में अपना सर हिला दिया। श्रीचंद्र ने उसे एक पखवाड़े में आने को कहा। इस बीच वह दिन-रात उस चित्र की नकल उतारने में लगा रहा। जैसे ही वह अवधि खत्म हुई, शिवदत्त वहां आ उपस्थित हुआ। राजा जयसेन भी वहीं विराजमान थे। उनके सामने श्रीचंद्र ने दोनों चित्र रख दिये और शिवदत्त से बोला कि वह असली चित्र पहचाने। थोड़ी देर तक तो शिवदत्त उन चित्रों को देखता रहा, फिर उसने आसानी से असली चित्र पहचान लिया। यह पहचान और किसी के बूते की नहीं थी, क्योंकि दोनों चित्र हूबहू एक जैसे थे। यह केवल शिवदत्त के बूते का ही था।

असली चित्र के पहचान लिये जाने पर श्रीचंद्र ने संतोष की सांस ली और बोला, "शिवदत्त, तुम जीत गये। तुम अपना चित्र वापस ले जा सकते हो।"

राजा जयसिंह भी उन दोनों चित्रों को बराबर देख रहे थे। बोले, "दोनों चित्र बिलकुल एक जैसे हैं। कहीं कोई अंतर दिखाई नहीं देता। फिर भी तुमने असली चित्र कैसे पहचाना?"

शिवदत्त का उत्तर इस प्रकार था, "महाराज, श्रीचंद्र एक महान कलाकार हैं। उन्होंने असली चित्र की ऐसी अनुकृति तैयार की है जो शत-प्रतिशत असली दिखाई देती है। मेरी माता जी के कान के नीचे उस छोटे से तिल को भी इन्होंने बड़ी सावधानी से दिखाया है। लेकिन असली चित्र में मेरी माता जी के नाक के आभूषण में नीला पत्थर था। मैं यह अच्छी तरह जानता हूं, क्योंकि मैं अपनी माता जी का चित्र सुबह-शाम बड़े ग़ौर से देखा करता था। अनुकृति में श्रीचंद्र जी ने गलती से उस आभूषण के पत्थर को लाल कर दिया था। इसी छोटे से अंतर से मैं असली चित्र पहचान सका। पर मुझे यह सोचकर हैरानी हो रही है कि ऐसे श्रेष्ठ कलाकार से ऐसी
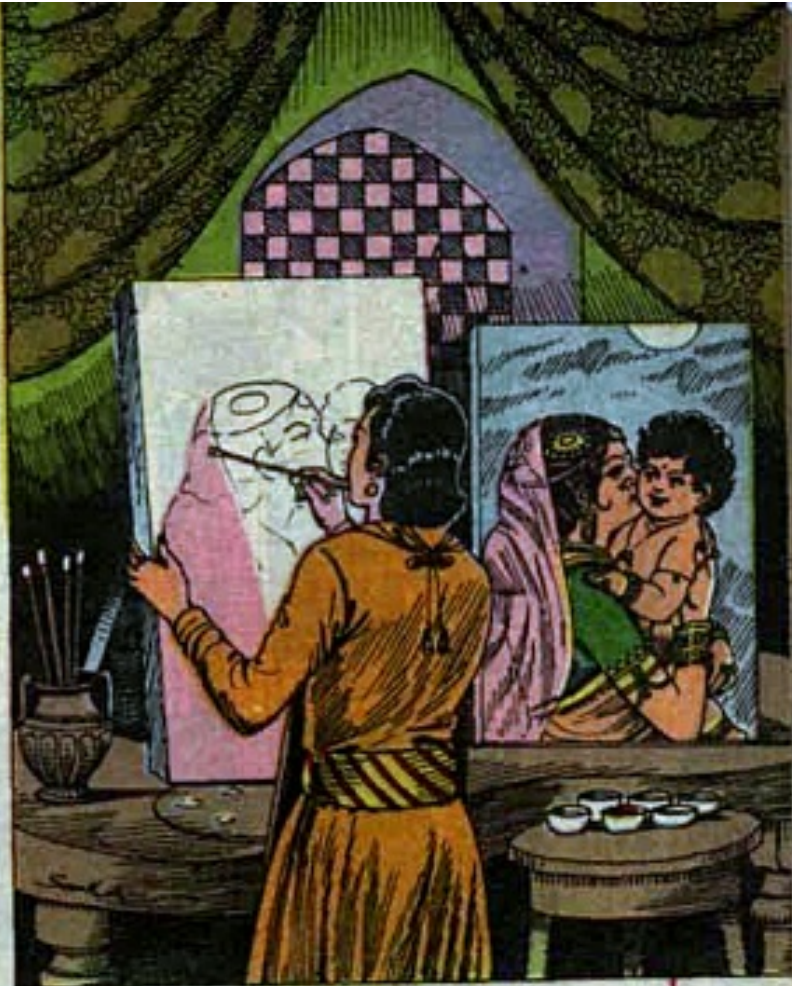
जिस चीज़ को वह एक बार खरीद लेता था, उसे लौटाने की तो वह कभी सोच भी नहीं सकता था। उस दिन भी वह अपने नियम का उल्लंघन नहीं करना चाहता था, इसीलिए उसने शिवदत्त को चक्कर में डालना चाहा। उसने ज़बरदस्त ढोंग रचा। उसका विश्वास था कि वह एक श्रेष्ठ चित्रकार है, और जो अनुकृति वह तैयार करेगा, उसे शिवदत्त पहचान नहीं सकेगा और हार खाकर अपना-सा मुंह लेकर चला जायेगा। लेकिन चित्र की अनुकृति तैयार करते समय नाक के आभूषण के पत्थर का रंग उससे दूसरा हो गया जिसकी वजह से शिवदत्त असली चित्र आसानी से पहचान सका। सचाई तो यह ही थी। फिर भी

भूल कैसे हुई?" और यह कहकर शिवदत्त उस चित्र के साथ वहां से चला गया।

शिवदत्त के चले जाने के बाद राजा जयसेन ने अपने गले से एक बहुमूल्य हार उतारा और श्रीचंद्र के गले में पहना दिया। फिर वह बोले, "मित्र, आज तक मैं यही सोचकर दुखी होता रहा कि तुम में दान की भावना तो है, पर त्याग की नहीं है। लेकिन मेरी यह परेशानी भी दूर हुई। मैं अब यह भी समझ गया हूं कि वह गलती तुमसे उस चित्र में कैसे हुई।"

बैताल ने कहानी खत्म करके राजा विक्रम से कहा, "राजन्, जो कुछ मैंने बताया, उससे तो यही लगता है कि श्रीचंद्र वह चित्र शिवदत्त को बिलकुल नहीं देना चाहता था। राजा ने कहा कि सच्चाई क्या है, वह अच्छी तरह जानते हैं और त्यागी कहकर श्रीचंद्र की उन्होंने प्रशंसा ही नहीं की, उसे पुरस्कृत भी किया। क्या वह सब बेमतलब और हास्यास्पद नहीं लगता? अगर इन सब संदेहों के उत्तर जानते हुए भी आप सही उत्तर नहीं देंगे तो आपके सर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।"

बैताल की बात सुनकर राजा विक्रम बोले, "श्रीचंद्र ने शिवदत्त की मां के चित्र की अनुकृति तैयार करते समय जानबूझकर नाक के आभूषण के पत्थर का रंग बदला या नहीं, इसका निर्णय करने से पहले हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि राजा जयसेन और श्रीचंद्र के बीच गहरी दोस्ती थी। राजा

ने उस चित्र को कुछ दिनों के लिए अपने अंतःपुर में रखने की श्रीचंद्र से अनुमति मांगी थी, और उस पर भी श्रीचंद्र ने इनकार कर दिया था। उसने यही कहा था कि वह अपने नियमों को तोड़ना कतई पसंद नहीं करता। ऐसी नाजुक स्थिति में शिवदत्त वहां पहुंचा था और उसने वह चित्र वापस चाहा था। अगर श्रीचंद्र वह चित्र शिवदत्त को तुरंत लौटा देता तो ज़रूर राजा जयसेन को श्रीचंद्र पर गुस्सा आता।

"शिवदत्त की मांग के पीछे श्रीचंद्र, मां के प्रति उसकी भावना को समझ रहा था। राजा के क्रोध के डर से उसने वह चित्र लौटाने से एक बार तो इनकार कर दिया था, लेकिन वह यह भी नहीं चाहता था कि बेटे के मन में अपनी मां के प्रति जो भावना है, उसे किसी प्रकार की ठेस पहुंचे और वह उस चित्र की बात मन में लेकर हमेशा दुखी होता रहे। इसीलिए जानबूझकर ही श्रीचंद्र ने नाक के आभूषण के पत्थर का रंग बदल दिया था ताकि शिवदत्त आसानी से नकली और असली चित्र के बीच पहचान कर सके। शिवदत्त ने नकली चित्र एकदम से पहचान ही लिया। यह कहना गलत होगा कि श्रीचंद्र जैसे कुशल कलाकार ने अनुकृति तैयार करते समय जब कान के नीचे एक छोटे से तिल को भी नहीं छोड़ा, तब उससे आभूषण के पत्थर के रंग के बारे में यह भूल हो गयी। इस वास्तविकता को जानते हुए ही राजा जयसेन ने श्रीचंद्र की त्याग की भावना की प्रशंसा की थी, और उन्होंने कहा था कि सच्चाई क्या है, इसे वह अच्छी तरह जानते हैं।"

उत्तर देने से राजा विक्रम का मौन भंग हो चुका था जिससे बैताल लाश-समेत वहां से ग़ायब हो गया और फिर पहले वाली पेड़ की शाखा से जा लटका।

(कल्पित)

[आधार : एन. आर. शिवनागेश की रचना]

चिह्नशास्त्र

राजा चित्रसेन को चिह्नशास्त्र में बेहद विश्वास था। कुछ लोग उनकी इस दुर्बलता का लाभ भी उठाते, वे राजा को इधर-उधर की सुनाते और कुछ रकम ऐंठकर चलते बनते।

मंत्री सुवर्ण को यह बात बहुत अखरती। उसे लगता कि यह सब राजा का कोरा वहम है और उसे इससे मुक्ति मिलनी ही चाहिए। इसलिए वह हमेशा ऐसे ही मौके की तलाश में रहता।

एक दिन पड़ोस के राज्य से एक व्यक्ति दरबार में आया। उसने अपना नाम शिवनाथ बताया और साथ ही उसने यह भी कहा कि चिह्नशास्त्र का वह बहुत बड़ा ज्ञाता है। राजा चित्रसेन ने उसे अपने शरीर के सभी चिह्न दिखाये और उससे कहा कि वह उन्हें परखकर उनका फल बताये।

शिवनाथ ने अपने झोले में से सूक्ष्मवीक्षण कांच निकाला और राजा के शरीर के चिह्नों को देखने-परखने लगा। फिर उसने उन चिह्नों का फल बताना शुरू कर दिया।

शिवनाथ राजा की कलाई के एक चिह्न को देख बोला, "राजन्, यह चिह्न तो ग़जब का है। यदि यह थोड़ा और बड़ा होता तो आप निस्संदेह एक विशाल साम्राज्य के सम्राट् होते।"

उस समय मंत्री सुवर्ण भी वहीं मौजूद था। उसने तुरंत एक पहरेदार को बुलाया और उससे कहा कि वह अपनी दाहिनी कलाई दिखाये। पहरेदार ने ऐसा ही किया। उसकी कलाई पर जो चिह्न था, वह उतना ही बड़ा था जितना कि शिवनाथ ने राजा की कलाई पर देखना चाहा था। शिवनाथ के कहे अनुसार तो उस पहरेदार को किसी विशाल साम्राज्य का सम्राट होना चाहिए था। अब राजा चित्रसेन समझ गये कि शिवनाथ केवल इधर-उधर की हांक रहा है, और उसकी बातों में कोई सच्चाई नहीं है।

इधर शिवनाथ की तो पूछो मत। वह हाल-बेहाल हो रहा था और उसका चेहरा एकदम फ़क पड़ गया, जैसे कि उसके काटो तो खून नहीं। लेकिन उसी दिन से राजा चित्रसेन की चिह्नशास्त्र में समूची आस्था काफ़ूर हो चुकी थी।

—लोकेश्वर प्रकाश
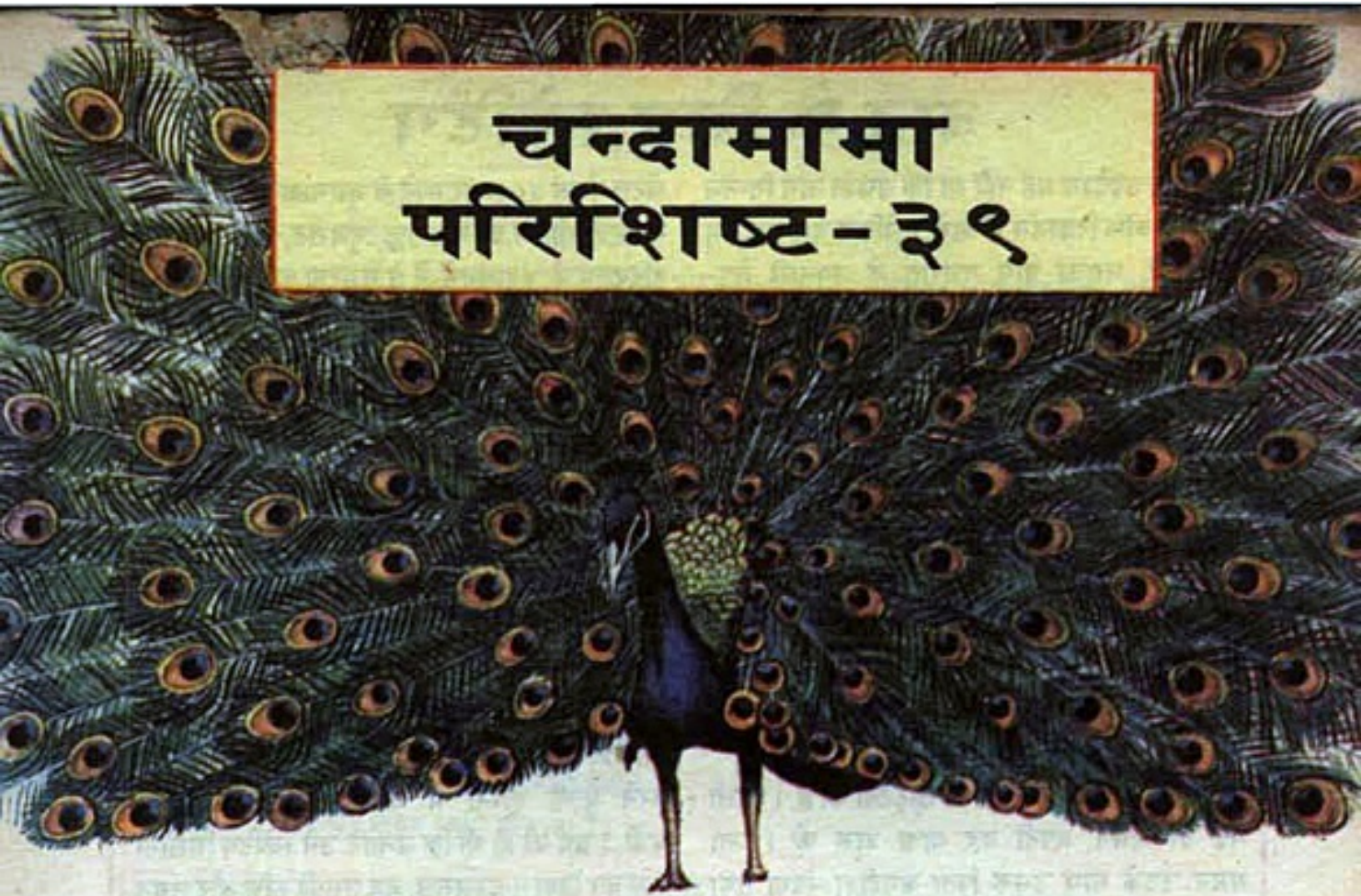
<u>भारत के पशु-पक्षी</u>

मोर

कहावत है कि वह "मोर की तरह इठलाता है।" बेशक, मोर हमारे पक्षियों में सबसे अधिक गर्वीला पक्षी है। यह एक बहुत बड़ा पक्षी हो जो कि तीतर के परिवार से संबंधित है। इसकी सबसे बड़ी पहचान इसकी लंबी पूंछ है जो कि कई बार १.२ मीटर से भी ज़्यादा लंबी होती है। यह पक्षी उस समय वाकई राजसी ठाठ-बाट वाला दिखता है जब यहअपनी पूंछ पंखे की तरह फैलाता है। उस समय उस पूंछ पर अनेक नीले और हरे चिह्न देखे जा सकते हैं। ये चिह्न बहुत ही सुंदर दिखते हैं। आंख की शक्ल के इन चिह्नों के चारों ओर तांबई रंग का घेरा रहता है। उस पक्षी के सर पर काफी बड़ी कलगी सुशोभित होती है।

मेर की मादा, यानी मोरनी, की कोई पूंछ नहीं होती। इसके शरीर पर भूरे रंग के दाग होते हैं। इन दागों में छाती के हिस्से पर हरे और नीले रंग झिलमिलाते हैं। मोरनी के भी एक कलगी होती है। यह एक वक्त में पांच से ज़्यादा अंडे नहीं देती। ये अंडे हलका-सा पीलापन लिये रहते हैं।

यह पक्षी आम तौर पर अनाज के दाने, पौधों की नरम टहनियां और कीड़े-मकोड़े खाता है। देखने में ऐसा भी आया है कि कभी-कभी यह छिपकलियां और सांप भी खा जाता है।

मोर भारत का राष्ट्रीय पक्षी है। इसे भगवान कार्तिकेय का वाहन भी कहा जाता है।

दान के लिए स्केटिंग

उसका उद्देश्य यह नहीं था कि उसका नाम गिन्नेस बुक ऑफ रिकार्डस में आये । लेकिन जहां तक हम जानते हैं, उसका नाम गुजरात के नवसारी नेत्र-चिकित्सा महाविद्यालय में सम्मान के साथ लिया जाता है । नहीं, वह लड़की उस महाविद्यालय की विद्यार्थिनी भी नहीं है ।

उसका नाम है शीतल पंड्या । उम्र होगी उसकी मुश्किल से ८ वर्ष । वह बड़ोदरा में अंग्रेजी माध्यम वाली एक पाठशाला के तीसरे दर्जे में पढ़ती है । नवसारी महाविद्यालय के लिए उसने काफी पैसा इकट्ठा किया और हर किसी के मन को जीत लिया । यह पैसा जानते हो उसने कैसे इकट्ठा किया? बंबई से दिल्ली के बीच की १६०० किलोमीटर की दूरी रोलर स्केटिंग से तय करके ।

यह घटना पिछली गरमी की छुट्टियों की है । पहली मई को उसने अपनी यह यात्रा शुरू की । उस समय उसके साथ उसके पिता जगदीश पंड्या तथा दो और लोग भी थे । वे सब रोलर्स पर थे । उनके साथ कुछ और लोग भी थे जो कार में सवार थे । यात्रा की शुरुआत सिने-अभिनेता तथा संसद सदस्य श्री सुनील दत्त ने झंडी हिलाकर की । शीतल २२ जून को दिल्ली पहुंची । उसके इस अभियान का प्रायोजन बैट्री निर्माण करने वाली एक कंपनी ने किया था । इस यात्रा के दौरान कुल २ लाख रुपये दान के रूप में इकट्ठे हुए, जबकि बंबई का एक जाना-माना होटल केवल ५० हजार रुपये ही जुटा पाया । दिल्ली पहुंचने से पहले शीतल को महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और हरियाणा के ४३ नगरों में से गुजरना पड़ा ।

शीतल का यह कारनामा, दरअसल, चौथा था । जब वह ५ वर्ष की ही थी तो उसने कैंसर के रोगियों के लिए पैसा इकट्ठा करने के उद्देश्य से दिल्ली से बंबई तक रोलर स्केटिंग किया था । एक साल के बाद उसने गांधीनगर (अहमदाबाद) से बंबई तक की ६०० किलोमीटर की दूरी तय की । जब वह ७ वर्ष की थी तो उसने कलकत्ता से कानपुर तक की १००० किलोमीटर की दूरी स्केटिंग करके ही तय की । तब उसे शुभ-यात्रा कहने वाली और कोई नहीं, स्वयं मदर टेरेसा थी ।

इस सब की शुरुआत कैसे हुई? शीतल के पिता जगदीश स्वयं एक खिलाड़ी हैं । वह एक कैमरा निर्माण करने वाली कंपनी में काम करते हैं । शीतल अभी ३ वर्ष की ही थी कि उन्होंने उसे स्केटिंग सिखाना शुरू कर दिया । दरअसल, वह उसकी रुचि और लगन से बहुत प्रभावित थे । एक साल बाद ही वह उसे एक लंबे स्केटिंग अभियान पर ले गये । अब शीतल हर रोज़ ६० किलोमीटर का अभ्यास करती है । उसकी अब यही इच्छा है कि वह कहीं विदेश में अपनी इस कला का प्रदर्शन करे । कौन जानता है कि एक दिन शीतल संसार की सबसे अच्छी स्केटिंग करने वाली खिलाड़ी सिद्ध हो और गिन्नेस बुक ऑफ रिकार्ड्स में स्थान पाने के अलावा और कई रिकार्ड्स बुक्स में भी स्थान पाये ।

क्या तुम जानते हो?

१. एलिफेंटा गुफाएं कहां पर हैं?
२. एवरेस्ट की चोटी पर पहली बार कब विजय प्राप्त की गयी? ये विजेता कौन थे?
३. १५वीं शताब्दी के एक भारतीय सूफी संत को हिंदू और मुसलमान बराबर-बराबर अपना मानते थे । वह कौन था?
४. वह भारत आया, उसने कई भारतीयों का ईसाई धर्म में परिवर्तन किया और पहली शताब्दी में एक शहीद के नाते मृत्यु को प्राप्त हुआ । वह कौन था?
५. भारत की पहली महिला डॉक्टर कौन थी?
६. सर्वोच्च न्यायालय की पीठ पर बैठने वाली भारत की पहली महिला न्यायाधीश कौन थी?
७. उसने भारतीय हवाई सेवा का पहला जहाज़ उड़ाया । वह कौन था?
८. भारतीय वायु सेना कब अस्तित्व में आयी?
९. भारतीय वायु सेना का पहला प्रमुख कौन था?
१०. भारत का सबसे पुराना जलपोत निर्माण-स्थल (गोदी) कौन-सा है? उसकी स्थापना किसने की?
११. भारत की बाल चित्र संस्था की स्थापना कब हुई?
१२. भारत के किस राज्य में सबसे ज़्यादा पशु-धन है?
१३. शेर को कब भारत का राष्ट्रीय पशु चुना गया?
१४. भारत में पहला डाक टिकट कब जारी हुआ?
१५. सिखों का सबसे पवित्र स्थान कौन-सा है?

उत्तर

१. बंबई बंदरगाह के निकट, ऐलिफेंटा टापू पर ।
२. १९५३ में । विजेताओं के नाम थे- भारत के तेनसिंह नोर्के और न्यूज़ीलैंड के सर एडमंड हिलेरी ।
३. कबीर ।
४. सेंट टॉमस । वह ईसा मसीह के बारह शिष्यों में से एक थे । वह सन् ५२ में जिस स्थल पर पहुंचे, उसे अब केरला कहा जाता है । १६ वर्ष बाद उनकी उसी गिरजाघर में हत्या कर दी गयी जिसे उन्होंने अपने नाम पर मद्रास के निकट एक टीले पर बनवाया था । बाद में उनकी अस्थियों को उसी नगर के एक गिरजाघर में सुरक्षित रख छोड़ा गया ।
५. डॉ. आनंदी बाई जोशी, जिन्होंने १८८६ में अमरीका से एम. डी. की उपाधि प्राप्त की और लगभग एक वर्ष तक महाराष्ट्र में चिकित्सक के रूप में काम करती रहीं । खराब स्वास्थ्य के कारण २६ फरवरी, १८८७ को उनका देहांत हो गया ।
६. केरला की जस्टिस फातिमा बीबी ।
७. जे. आर. डी. टाटा ।
८. ८ अक्तूबर, १९३२ । इसे अब हर वर्ष वायु सेना दिवस के रूप में मनाया जाता है ।
९. सुब्रोतो मुकर्जी ।
१०. विशाखापट्टनम का हिंदुस्तान शिपयार्ड । इसकी स्थापना १९४१ में बंबई की सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कंपनी ने करवायी थी ।
११. १९५५ में, सिने चित्रों का निर्माण करना, उस वास्ते पैसा जुटाना और बाल चित्रों के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समारोहों का आयोजन करना । ७ वें अंतर्राष्ट्रीय बाल चित्र समारोह का आयोजन केरला के तिरुवनंतपुरम में गत नवंबर में हुआ ।
१२. उत्तर प्रदेश ।
१३. नवंबर, १९७२ में । तब तक बब्बर शेर को राष्ट्रीय पशु माना जाता था । यह परिवर्तन इसलिए किया गया क्योंकि बब्बर शेर की संख्या निरंतर कम होती जा रही थी ।
१४. १८९२ में । समूचे एशिया में जारी होने वाले पहले डाक टिकट "सिंधे डॉक्स" नाम से थे ।
१५. अमृतसर में गुरुद्वारा हरमिंदर साहिब (स्वर्ण मंदिर)

शिव भक्त बंदर

हनुमान राम भक्त था । दिल्ली में इधर एक बंदर था जिसे शिव भक्त कहा जा सकता है । वह एक पेड़ पर रहता था जिसके नीचे एक शिव मंदिर है । हर सुबह वह बंदर चार बजे के आस-पास पेड़ से नीचे उतरता और मंदिर के गर्भगृह के सामने हाथ जोड़कर कुछ मिनटों के लिए खड़ा रहता और फिर वापस पेड़ पर चढ़ जाता । मंदिर में सुबह-सुबह जो भक्त आते थे, वे १० वर्षों तक इस विचित्र दृश्य को देखते रहे । उनके मन में इस "पवित्र वानर" के लिए अगाध श्रद्धा थी । धीरे-धीरे यह भक्त बूढ़ा होता गया और पहली नवंबर को इसका देहांत हो गया । कहते हैं कि इसकी शवयात्रा में बीस हज़ार लोग थे । इसके पार्थिव शरीर को गंगा जल से नहलाया गया और उसे जुलूस के साथ यमुना तक ले जाया गया । वहां मंत्रोच्चारण के साथ उसका विसर्जन कर दिया गया ।

चंदामामा की खबरें

रात्रि भोजन में कौवा

विश्वास नहीं होता न? तो जापान के समुद्री तट के कृषि नगर किसाकाटा में जकर देख लो । वहां लोग कौवे खाते मिलेंगे । लगता है उन्हें यह पकवान बहुत स्वादिष्ट लगता है, क्योंकि जब वे इसे खाते हैं तो उन्हें यह भी आभास होता रहता है कि वे उन भयंकर पक्षियों को सजा दे रहे हैं जो एक वर्ष में उनकी ७,५०० डालर मूल्य की फसलें बरबाद करते हैं । इधर पिछले ३ वर्षों से एक ऐसा प्रयोग शुरू किया गया है जिससे एक महीने में लगभग २०० पक्षियों को फांस लिया जाता है । और जैसे ही उन्हें फांसा जाता है, वैसे ही उन्हें रसोईघर में पहुंचा दिया जाता है ।

प्रेतों का डेरा

युवा किशन को शहर में नौकरी तो मिल गयी । लेकिन वहां उसे कोई रहने की जगह देने को तैयार नहीं था ।

उसने मकान की खूब तलाश की । वह अब काफी थक गया था । आखिर उसकी अमीर नाम के व्यक्ति से मुलाकात हुई । उस व्यक्ति ने कहा, "शहर के छोर पर मेरा एक मकान है, लेकिन लोग उसे प्रेतों का डेरा समझते हैं । मैं तुमसे किराया भी नहीं लूंगा । तुम मज़े से वहां रहो ।"

किशन बहुत खुश था । उसी रात वह उस मकान में रहने के लिए चल पड़ा । वहां पहुंचा तो उसने वहां ताला लगा पाया । फिर जैसे ही वह थोड़ा आगे बढ़ा, ताला अपने आप खुल गया । फिर दरवाजे भी अपने आप खुलने लगे । इससे किशन एकदम खौफ से भर गया, लेकिन उसने साहस को हाथ से जाने नहीं दिया । फिर किशन के सामने एक अस्पष्ट आकार आया, बोला, "मैं इस मकान का प्रेत हूं । मैं यहां का मालिक हूं । मेरे साथ तीन और प्रेत रहते हैं । अगर तुम यहां रहना चाहते हो तो तुम्हें मुझे खुश रखना होगा ।"

किशन ने उस प्रेत को नमन किया और बोला, "मैं इसी मकान में रहना चाहता हूं । तुम जो कहोगे, करूंगा ।"

तब उस प्रेत ने बाकी के तीनों प्रेतों को बुलाया और उनका किशन से परिचय करवाया, "यह मेरी पत्नी है । ये दोनों मेरी बेटियां हैं ।" इन दोनों में कौन ज्यादा सुंदर है, यह फैसला मैं नहीं कर पा रहा । यह फैसला अब तुम्हीं करोगे ।"

किशन ने दोनों प्रेतबालाओं की ओर देखा, झूठी गंभीरता ओढ़कर बोला, "अगर मैं सच-सच कहूं तो तुममें से एक को ज़रूर गुस्सा आयेगा । लेकिन अगर मुझे थोड़ा

शरत कुमार वर्मा

पहली प्रेतबाला की प्रशंसा हुई थी तो दूसरी प्रेतबाला को गुस्सा आना स्वाभाविक था । उसे ताज्जुब हो रहा था कि इस मानव ने उसे सुंदर क्यों नहीं समझा । वह रूठ गयी और एक कोने में जा बैठी । किशन उस प्रेतनी के निकट गया और उससे बोला, "सुंदर तो वास्तव में तुम ही हो, अगर मैं उस समय यह बात कह देता तो तुम फौरन घर से चल देती, लेकिन मैं यह नहीं चाहता था । मैं तुम्हें हर रोज देखना चाहता हूँ । इसीलिए मैंने झूठ-मूठ कहकर उसे घर से बाहर कर दिया ।"

किशन की बात सुनकर प्रेतबाला बोली, "तुम कहते तो ठीक हो, लेकिन एक बात का मुझे डर है । अगर मेरी बहन यहां वापस चली आयी तो हमें फिर क्या करना होगा?"

"इसमें परेशान होने की क्या बात है? वह अगर वापस चली आती है तो इसका मतलब है, किसी प्रेत ने उसे पसंद नहीं किया । यानी कि वह सुंदर नहीं है, वरना उसकी सुंदरता पर रीझकर कोई प्रेत उससे जरूर शादी कर लेता । पर बदसूरत कहलाना तुम्हारी बहन को पसंद नहीं आयेगा । इसलिए वह यहां लौटकर भी नहीं आयेगी," किशन ने अपना तर्क दिया ।

"तुम मेरा गुस्सा ठंडा करने के लिए झूठ कह रहे हो । मैं वाकई खूबसूरत नहीं हूं ।" उस प्रेतबाला ने रूठते हुए कहा ।

"अगर मैं झूठ भी कहा रहा हूं तो तुम्हें तसल्ली देने के लिए ही कह रहा हूं । पर समय मिले तो मैं उस गुस्से को ठंडा करने की कोशिश कर सकता हूं ।"

फिर किशन ने उन दोनों प्रेतबालाओं में से एक से कहा, "दोनों में तुम ज़्यादा सुंदर हो । इतनी सुंदर होने पर भी तुम यहां अपने माता-पिता के यहां क्या कर रही हो? किसी जंगल में चली जाती तो अब तक तुम्हें कोई सुंदर युवक साथी मिल गया होता, जिससे तुम शादी कर सकती थी ।"

वह प्रेतबाला किशन की बातों में आ गयी और अपने पिता प्रेत से बोली, "यह मानव ठीक कहता है । मैं जंगल में चली जाती हूं । मुझे आशीर्वाद दो ।" और यह कहकर वह अपने माता-पिता के पांवों पर झुकी और आशीसें लेकर वहां से चल दी ।

तसल्ली भी मैं सुंदर लड़कियों को ही देता हूं, हर किसी को नहीं ।" किशन ने एक और चाल चली ।

"अच्छा, अगर तुम वाकई मुझे सुंदर समझते हो तो क्या तुम मुझसे शादी करोगे?" वह प्रेतबाला बोली ।

"मैं मानव हूं । तुम प्रेत-योनि की हो । क्या हम दोनों की शादी संभव है?" किशन ने डरते-डरते कहा ।

"मैं जब चाहूं, तब मानव-रूप धारण कर सकती हूं । मैं चहती भी हूं कि मैं किसी मानव से शादी करूं ।" वह प्रेतबाला बोली ।

इस बीच प्रेत भी वहां आ गया था । वह बोला, "क्यों, मेरी बेटी का गुस्सा शांत हुआ कि नहीं?"

तब उस प्रेतबाला ने अपने पिता से कहा, "पिताजी, यह मानव मेरे साथ शादी करने के लिए तैयार हो गया है ।"

बेटी की बात सुनकर उसके माता-पिता बहुत खुश हुए । वे आनंद-विभोर होकर चीखने-चिल्लाने लगे और साथ ही नाचने भी लगे ।

किशन अब गुस्से में आ गया था । उसने ज़ोर से कहा, "यह नाचना-गाना बंद करो । मैंने हां कह दी तो इसका मतलब यह नहीं कि शादी हो गयी । मुझे दहेज भी चाहिए । हां, दहेज!"

"मांगो, क्या मांगते हो? मैं इसलिए यहां रह रहा था कि अपनी दोनों बेटियों की शादी

कर सकूं । तुम दहेज में जो कुछ भी मांगोगे, मैं देने को तैयार हूं ।" उस प्रेतबाला के पिता ने कहा ।

"मुझे कुछ नहीं चाहिए । बस मुझे यह घर दे दो । मेरे लिए यही काफी है ।" किशन ने गंभीरता से कहा ।

"ठीक है, हमें यह मंजूर है । तुम यह घर ले सकते हो ।" प्रेत ने कहा ।

"तो सुनो, इस घर में मैं और मेरी बीवी रहेंगे । तुम दोनों मिया-बीवी यहां से चलते बनो ।" किशन ने कहा ।

"यह तो घोर अन्याय है । हम दोनों भी यहां रहें तो तुम्हारा क्या बिगड़ता है?" मुख्य प्रेत ने जानना चाहा ।

"अगर तुम दोनों यहां रहोगे तो लोग

किशन अब अपनी पत्नी से बोला, "मैंने तुम्हारे सारे सगे-संबंधियों को निर्मम होकर इस घर से भगा दिया । मुझे इस बात का सख्त अफसोस है ।"

"तुमने जो कुछ किया, ठीक ही किया ।" किशन की प्रेतनी पत्नी बोली, "मेरे मां-बाप यही तो चाहते थे न कि मेरी शादी हो जायें, हम जब मानव योनि में थे, तब मेरे पिता जी ने मेरे और मेरी दीदी के लिए रिश्ते पक्के कर लिये थे और हमारी शादी होने वाली थी । तब अमीर नाम के एक व्यक्ति ने धोखे से हमारे खेत हड़प लिए जिससे हमारी शादी रुक गयी । हम सब बेसहारा हो गये । मेरी दीदी को अपनी सुंदरता पर बहुत भरोसा था । वह सोचती थी कि उसकी सुंदरता पर रीझकर उसका मंगेतर उससे शादी कर लेगा । वह अपने मंगेतर के पास गयी, लेकिन अपमानित होकर वहां से चली आयी । फिर उसने आत्महत्या कर ली । इस घटना से हम लोग इतने दुखी हुए कि हम सबने भी विष खा लिया । हम इस अमीर नाम के व्यक्ति से बदला लेना चाहते थे । इसीलिए हम उसके नये मकान में रहने लगे । अब दीदी अपनी शादी खुद करने के लिए यहां से चली गयी है । मेरी शादी तुम्हारे साथ हो ही गयी है । अब मेरी और किसी प्रकार की आकांक्षा नहीं ।"

"जब तुम्हारी कोई आकांक्षा ही नहीं रही तो तुम्हें प्रेत योनि में रहने की क्या ज़रूरत है?" किशन ने प्रश्न किया ।

यही समझेंगे कि मैं तुम्हारा घर-जंवाई हूं और सास-ससुर के पैसे पर पलता हूं । मैं यह बदनामी सहन नहीं कर सकता । मैं अब फिर तुमसे जानना चाहता हूं-क्या तुम यह घर छोड़कर जाओगे कि नहीं?" किशन ने प्रश्न किया ।

"हम जायेंगे, दामाद बाबू, हम जायेंगे । हम कहीं भी चले जायेंगे । बस, हमारी बेटी यहां सुख-शांति से रहे । इसी में हमारा संतोष है ।" और यह कहकर वह प्रेत और प्रेतनी वहां से चलने को हुए । जाते-जाते मां ने अपनी बेटी को कई नेक नसीहतें दीं ।

प्रेत, प्रेतनी तथा उनकी एक बेटी उस घर को छोड़कर जा चुके थे । अब पीछे रह गये किशन और उसकी प्रेतनी पत्नी ।

किशन का इतना कहना था कि वह प्रेतबाला वहां से गायब हो गयी । उसे शायद प्रेत योनि से मुक्ति मिल गयी थी ।

उस रात किशन उस घर में बड़े इत्मीनान के साथ सोया । सुबह हुई तो वह अमीर के यहां जा पहुंचा और उसके साथ जो कुछ घटा था, उसे बता दिया ।

अमीर ने किशन के साहस की खूब प्रशंसा की और उसे जो सफलता मिली थी उसके लिए उसे बधाई दी । फिर कहा "तुम मुझे हर तरह से श्रेष्ठ दीख पड़ते हो, मैं तुम्हें अपना दामाद बनाना चाहता हूं । मेरी, बस, एक ही बेटी है । मैं उससे तुम्हारी शादी करके वह मकान तुम्हें दहेज में देना चाहता हूं । पर हम अपनी इकलौती संतान अपनी बेटी से अलग नहीं रह सकते । इसलिए मैं चाहता हूं कि हम पति-पत्नी भी तुम लोगों के साथ उसी मकान में रहें ।"

अमीर की लड़की काफी सुंदर थी । इसलिए किशन ने उससे शादी के लिए अपनी स्वीकृति दे दी । पर इसके साथ ही उसने कहा, "आपकी लड़की से शादी करने में मुझे किसी प्रकार की आपत्ति नहीं । लेकिन मैं घर-जंवाई बनने को तैयार नहीं हूं । अगर मुझे यही सब पसंद होता तो मैं उस प्रेत कन्या को ही अपने साथ रखे रहता । बेशक, उसका रूप विचित्र था, पर उसका मन तो मोती की तरह उजला था । रही दहेज की बात, तो मैं दहेज के खिलाफ हूं । मेरी नौकरी है । मैं कमाता हूं, इसलिए आपकी बेटी और मैं, मेरी कमाई से अच्छी तरह गुज़ारा कर सकते हैं ।"

किशन का उत्तर सुनकर अमीर चुप हो गया । वह कुछ न कह सका । फिर किसी तरह इतना ही बोला, "एक बात तो तुम्हें माननी ही होगी । उस मकान का नाम प्रेतों का डेरा पड़ गया है । वहां रहने कोई नहीं आयेगा । इसलिए तुम और तुम्हारी पत्नी, वहीं आराम से रह सकते हो ।"

इसके लिए किशन ने सहर्ष अपनी स्वीकृति दे दी । अमीर की बेटी के साथ किशन की शादी बड़ी धूमधाम के साथ हुई ।

कंजूसी महंगी पड़ी

बात पुरानी है। सौरतपुर गांव में रामसिंह नाम का एक सौदागर रहता था। वह काफी कंजूस था।

एक दिन वह किसी काम से पड़ोस के एक गांव की ओर जा रहा था। रास्ते में उसे एक खजूर का पेड़ दीख पड़ा। उस पर खजूर के गुच्छे लटक रहे थे। किसी न किसी तरह चढ़ते फिसलते वह उस पेड़ की चोटी तक पहुंच ही गया।

पेड़ की चोटी तक पहुंच कर उसने खजूरें खानी शुरू कर दीं और कुछ खजूरें उसने अपनी जेब में भी भर लीं। अब वह पेड़ से नीचे उतरने के लिए तैयार ही था कि उसकी निगाह नीचे ज़मीन की ओर गयी। उसे लगा कि जमीन जैसे कि पाताल में हो।

उसने प्रार्थना की—हे भगवान, अगर मैं सही-सलामत पेड़ से नीचे उतर सका तो मैं एक हजार लोगों को भोजन कराऊंगा।

मन्नत मांगने से उसका हौसला कुछ बढ़ा और वह धीरे-धीरे पेड़ से नीचे उतरने लगा। जब वह कुछ नीचे आया तो उसे लगा कि धरती अब काफी नजदीक है। तब उसने सोचा, हजार लोगों को भोजन कराना बहुत ज्यादा होगा। पांच सौ को भी करा दिया तो काफी होगा।

अब वह बराबर नीचे उतरे जा रहा था। उतरते-उतरते उसे लगा कि पांच सौ लोगों को भोजन कराना भी बहुत ज़्यादा होगा। एक सौ क्यों नहीं?

आखिर, वह पेड़ से सही-सलामत नीचे उतर ही आया। तब उसके मन में एक और विचार आया। सौ लोगों को भोजन? इससे तो एक सद्ब्राह्मण को पेट-भर खिला देना कहीं बेहतर होगा।

घर लौट रहा था तो उसके मन में विचारों का तांता लगा हुआ था। अब वह इस सोच

२५ वर्ष पूर्व चंदामामा में प्रकाशित कहानी

में था कि किस ब्राह्मण को भोजन कराया जाये? कोई पेटू ब्राह्मण मिल गया तो? उसे राम मंदिर के पुजारी रामशास्त्री का ख्याल आया जो काफी दुबला-पतला है ।

गांव पहुंचा तो वह सबसे पहले रामशास्त्री के यहां ही गया और उसे अगले दिन अपने यहां भोजन पर आने का न्यौता दे आया ।

रामसिंह अपनी कंजूसी के लिए तो मशहूर था ही । इसलिए रामशास्त्री हक्का-बक्का रह गया । फिर भी उसने उसे आश्वस्त किया कि वह भोजन के लिए ज़रूर पहुंचेगा ।

रामशास्त्री के यहां से रामसिंह अपने घर पहुंचा और अपनी पत्नी से बोला, "आज मुझे यों ही लौटना पड़ा । कल फिर जाना होगा । लेकिन मैंने रामशास्त्री पुजारी को भोजन के लिए न्यौता दिया है । यह काम कम-से-कम खर्च में निपटे ।"

और इसके साथ ही उसने उसे अपनी आपबीती सुना दी ।

दूसरे दिन सुबह-सुबह ही रामसिंह अपने काम पर पड़ोस के गांव के लिए निकल पड़ा । दोपहर के समय रामशास्त्री आया । रामसिंह की पत्नी ने पुजारी को आसन पर बैठाया और फिर उसके सामने भोजन परोस दिया ।

देखने को तो रामशास्त्री पुजारी पतला-दुबला था, पर था वह पेटू ही । तीन व्यक्तियों का खाना वह देखते ही देखते चट कर गया । जो बचा, वह उसने एक पोटली में बंधवा लिया । फिर विदा लेने लगा तो उसने देखा कि उसे दक्षिणा तो मिली

नहीं । बोला, "माई, तर्पण के लिए ब्राह्मण को दक्षिणा देना अनिवार्य है । ऐसा न करने से गृहस्थ का कभी भला नहीं होता । इसलिए मेरे इस पात्र में दो मोहरें डाल दो ।"

रामसिंह की पत्नी पहले तो किंकर्तव्यविमूढ़ होकर पुजारी की ओर देखने लगी, फिर उसने उसके पात्र में दो मोहरें डाल दीं, और ब्राह्मण प्रसन्न मन से लौट गया ।

दूसरे दिन जब रामसिंह घर वापस आया, तो उसकी पत्नी ने उसे पुजारी को दिये भोज के बारे में सब कुछ विस्तार से बता दिया और उसने यह भी बताया कि भोज के बाद उसने पुजारी को तर्पण के लिए दो मोहरें भी दी थीं ।

पत्नी की बात सुनते ही रामसिंह को ऐसे लगा जैसे उसका दिल फटा जा रहा है। वह अपनी पत्नी पर खूब बरसा, यहां तक कि उसने अपनी लाठी उठा ली और घर से बाहर की ओर भागते हुए बोला, "तुझे उसने खूब उल्लू बनाया है और मुझे अच्छी तरह लूटा है। मैं उसे अच्छा सबक सिखाऊंगा।"

रामशास्त्री पुजारी पहले से ही इसके लिए तैयार था। वह जानता था कि कुछ-न-कुछ ज़रूर होगा। इसलिए जैसे ही उसने रामसिंह को दूर से अपने घर की ओर आते देखा, वह तुरंत एक खटिया पर लेट गया। रामशास्त्री की पत्नी और उसका पुत्र खटिया के दोनों ओर बैठे जार-जार रोने लगे।

रामसिंह जब पुजारी के घर पहुंचा तो पुजारी के पुत्र ने रोते हुए कहा, "अरे सेठ जी, हमने आपका क्या बिगाड़ा था?" आपने मेरे पिताजी के भोजन में न जाने क्या मिला दिया जो घर पहुंचते ही कै करने लगे और अब खटिया पर पड़े हैं। वैद्य को बुलाया तो उसने बताया कि भोजन में विष था और इस विष को दूर करने के लिए दवा-दारू पर चार मोहरें खर्च आयेंगी। अब पहले इस बात का फैसला हो जाना चाहिए कि आपने मेरे पिता जी के प्राण लेने की कोशिश क्यों की। चलिए, हम मुखिया के सामने ही यह बात रखते हैं।"

बात मुखिया के सामने रखी जायेगी, तो दवा-दारू का खर्चा तो देना ही पड़ेगा। साथ में जो जुर्माना भरना पड़ेगा, सो अलग। यह सोचकर रामसिंह डर गया, और धीरे से बोला, "बेटा, मुखिया के पास जाने की क्या जरूरत है? तुम वैद्य जी से इलाज करा लो। जो खर्चा आयेगा, मैं उसे चुकता कर दूंगा।" और वह पुजारी के बेटे के सामने गिड़गिड़ाने लगा।

पुजारी के बेटे ने उस समय ऐसा अभिनय किया जैसे कि वह रामसिंह पर बड़ी दया दिखा रहा हो। उसने उससे चार मोहरें वसूल करके उसे चलता किया।

अब रामसिंह को जब भी खजूरों की याद आती, उसका दिल धक से रह जाता।

हनुमान ने विभीषण के बारे में जो सलाह दी, राम ने उसे धैर्यपूर्वक सुना और फिर बोले, "यदि विभीषण दुष्ट भी है तो भी वह आदरयोग्य है; क्योंकि वह हमारे पास शरणार्थी बनकर आया है। इसलिए हम उसकी किसी प्रकार भी उपेक्षा नहीं कर सकते।"

"वह चाहे दुष्ट हो या सज्जन, इससे हमें क्या लेना देना।" सुग्रीव ने टिप्पणी की। उसका विचार था कि जिस विभीषण ने अपने बड़े भाई रावण को कष्ट में अकेला छोड़ दिया है, वह अपना काम साधने की लिए किसी को भी छोड़ सकता है और इसलिए विश्वसनीय नहीं है।

राम सुग्रीव के विचारों से सहमत नहीं थे। इसलिए अब वह लक्ष्मण की ओर मुड़े। शायद विभीषण अपने बड़े भाई से डरकर यहां चला आया है। शायद वह उसका राज्य चाहता है। अगर ऐसी बात है, तब तो वह राम और वानरों का साथ कभी नहीं छोड़ेगा।

मगर लक्ष्मण के विचार कुछ और ही थे। उसने कहा, "भैया, हो सकता है रावण ने उसे हमारे यहां हमें मारने के लिए ही भेजा हो। इसे यहां रुकने की आज्ञा देना खतरे से खाली नहीं होगा।"

लेकिन राम अपनी बात पर अडिग रहे। बोले, "शरण में आये व्यक्ति को आश्रय देना और साथ ही उसे अभयदान देना एक क्षत्रिय का परम कर्तव्य है। ऐसे व्यक्ति को किसी प्रकार का भी आश्रय न देना महापाप होगा। और तो और, यदि स्वयं रावण भी

२०. रावण का सुग्रीव के नाम संदेश

इस तरह मेरी शरण में चला आता तो मैं उसे अभयदान दिये बिना कभी न लौटाता। इसीलिए विभीषण को तुरंत यहां पहुंचाया जाये। यही मेरी इच्छा है।"

राम सुग्रीव को संबोधित कर रहे थे। सुग्रीव अब लाचार था। इसलिए वह तुरंत विभीषण को वहां लिवा लाया।

विभीषण ने अपने चारों राक्षस साथियों के साथ राम की चरणवंदना की और बोला, "मैं रावण का छोटा भाई विभीषण हूं। मेरे बड़े भाई ने मेरा अपमान किया। इसलिए अब मैं आपकी शरण में आया हूं। यह अपमान न सह सकने के कारण लंका में मैंने अपने सभी सगे-संबंधियों, बंधु-बांधवों और संपत्ति को छोड़ दिया है। अब मेरा सब कुछ आप ही हैं। आप ही मेरा राज्य हैं, आप ही मेरा घर-परिवार हैं, आप ही मेरी संपत्ति हैं।"

विभिषण के ये उदगार राम के दिल में गहरे उतर गये। उन्होंने उससे कहा कि वह राक्षसों के बल के बारे में उन्हें कुछ बताये। विभीषण का वर्णन इस प्रकार था :

"रावण को ब्रह्मा का वरदान प्राप्त है जिसके कारण उसे गंधर्व, नाग, राक्षस या भूत, कोई नहीं हरा सकता। उस अजेय रावण का एक और छोटा भाई है, लेकिन वह विभीषण से बड़ा है। उसका नाम कुंभकर्ण है। वह पराक्रम में इंद्र से किसी प्रकार भी कम नहीं। रावण का एक पुत्र है इंद्रजित, जो युद्ध करते-करते अदृश्य हो जाता है। उसके शरीर तथा उसकी उंगलियों पर अभेद्य कवच रहते हैं। इस

शक्ति को बनाये रखने के लिए वह युद्ध के दौरान अग्नि की पूजा करता है। रावण के सेनाधिपति अपने बल और पराक्रम में दिक्पालों के समान हैं। लंका में ऐसे असंख्य राक्षस हैं जो जैसा चाहें, वैसा रूप धारण कर सकते हैं। इन्हीं राक्षसों की सहायता से रावण ने दिक्पालों को हराया था।"

विभीषण से यह विवरण पाकर राम बोले, "मैं रावण को तथा इन राक्षसों को मारकर तुम्हें लंका का राजा बनाऊँगा। मैं यह प्रतिज्ञा लेता हूं।"

राम की यह वीरोक्ति सुनकर विभीषण गद्गद हो गया। वह राम के चरणों में गिर पड़ा और उन्हें साष्टांग प्रणाम करते हुए बोला, "मैं भी राक्षसों का अंत करने और लंका पर विजय प्राप्त करने में आपकी भरसक सहायता करूंगा। आपके शत्रु मेरे भी शत्रु हैं, और मैं भी उनसे युद्ध करूंगा।"

राम ने विभीषण को गले लगा लिया और लक्ष्मण को आदेश दिया, "लक्ष्मण, सागर जल की व्यवस्था करो, ताकि विभीषण का राजा के रूप में अभिषेक किया जाये।"

सागर जल लाया गया और वानरों के बीच विभीषण का राक्षसों के राजा के रूप में अभिषेक हुआ। सब वानरों ने सिंहनाद किया और राम की कीर्ति का गान किया। उसके बाद सुग्रीव तथा हनुमान विभीषण को एकांत में ले गये और बोले, "हम इन वानरों के साथ इस समुद्र को कैसे पार करें?"

विभीषण का उत्तर इस प्रकार था :

"राम को समुद्र से शरण मांगनी चाहिए। राम के पूर्वज सगर ने समुद्र की
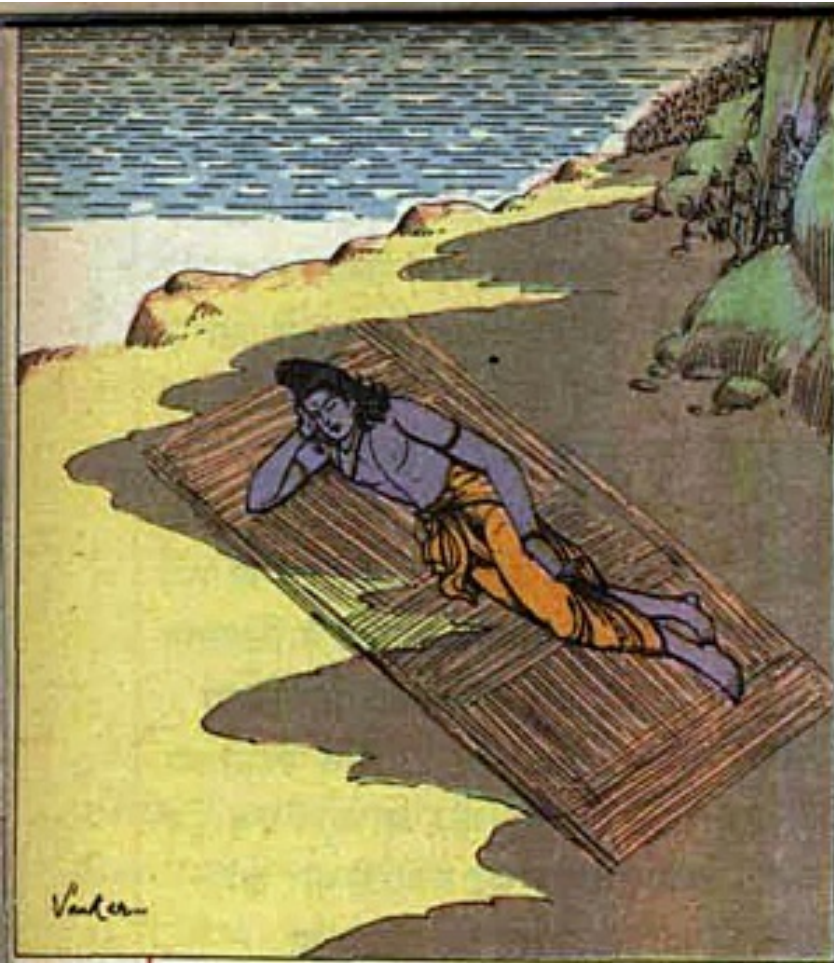
अत्यधिक सेवा की थी । इसलिए अब समुद्र हर तरह से राम की सहायता करेगा ।"

विभीषण का सुझाव पाकर सुग्रीव राम के पास आया । वहां लक्ष्मण भी मौजूद था । विभीषण के सुझाव से राम को बहुत संतोष हुआ । फिर उन्होंने लक्ष्मण और सुग्रीव की राय मांगी । उन्होंने भी विभीषण की राय का समर्थन किया । तब राम समुद्र के किनारे दूब बिछाकर लेट गये ।

इसी बीच रावण का एक गुप्तचर शार्दूल वहां आया और वानर सेना की पूरी स्थिति का जायजा लेकर रावण के पास लौट गया । रावण को उसने इस प्रकार बताया था :

"वानर-भालुओं की सेना सागर के समान है । राम और लक्ष्मण श्रेष्ठ अस्त्रों से सज्जित, सीता को छुड़ाने यहां पहुंचने वाले हैं । वे समुद्र के तट पर रुके हुए हैं, और पूरी तैयारी में हैं । मैंने वहां विहंगम दृष्टिपात किया । यदि आप गहराई से वहां की स्थिति के बारे में जानना चाहते हैं तो वहां किसी और को भेजना होगा ।"

अब रावण ने शुक नामक राक्षस को बुलाया और उसे आदेश दिया कि वह सुग्रीव के पास उसका यह संदेश लेकर जाये—

"सुग्रीव, तुम वानर राजा हो । तुम्हारा इस बात से क्या लेना-देना कि मैं राम की पत्नी सीता को लंका ले आया हूं । इन दोनों के बीच किसी प्रकार का कोई ताल्लुक नहीं । तुम बुद्धिमान हो । मेरी बात पर विचार करो और किष्किंधा लौट जाओ । लंका में देवता और गंधर्व भी प्रवेश नहीं पा सकते । तुम वानरों के साथ यहां कैसे आ पाओगे? सुना है तुम यहां आने की तैयारी कर रहे हो । ऐसा वहम मत पालो ।"

शुक ने रावण का यह संदेश अच्छी तरह आत्मसात कर लिया और पक्षी का रूप धारण करके, जहां वानर-सनाएं रुकी हुई थीं, वहीं ऊपर आकाश में मंडराने लगा । फिर उसकी दृष्टि सुग्रीव पर पड़ी । सुग्रीव काफी नीचे धरती पर था । शुक ने वहीं आकाश से रावण का संदेश सुनाना शुरू किया । शुक को इस तरह संदेश सुनाते देख वानरों का आक्रोश उफन पड़ा । उन्होंने चाहा कि वे शुक का वध कर दें । इसलिए वे आकाश में उठे और शुक को जा दबोचा और फिर
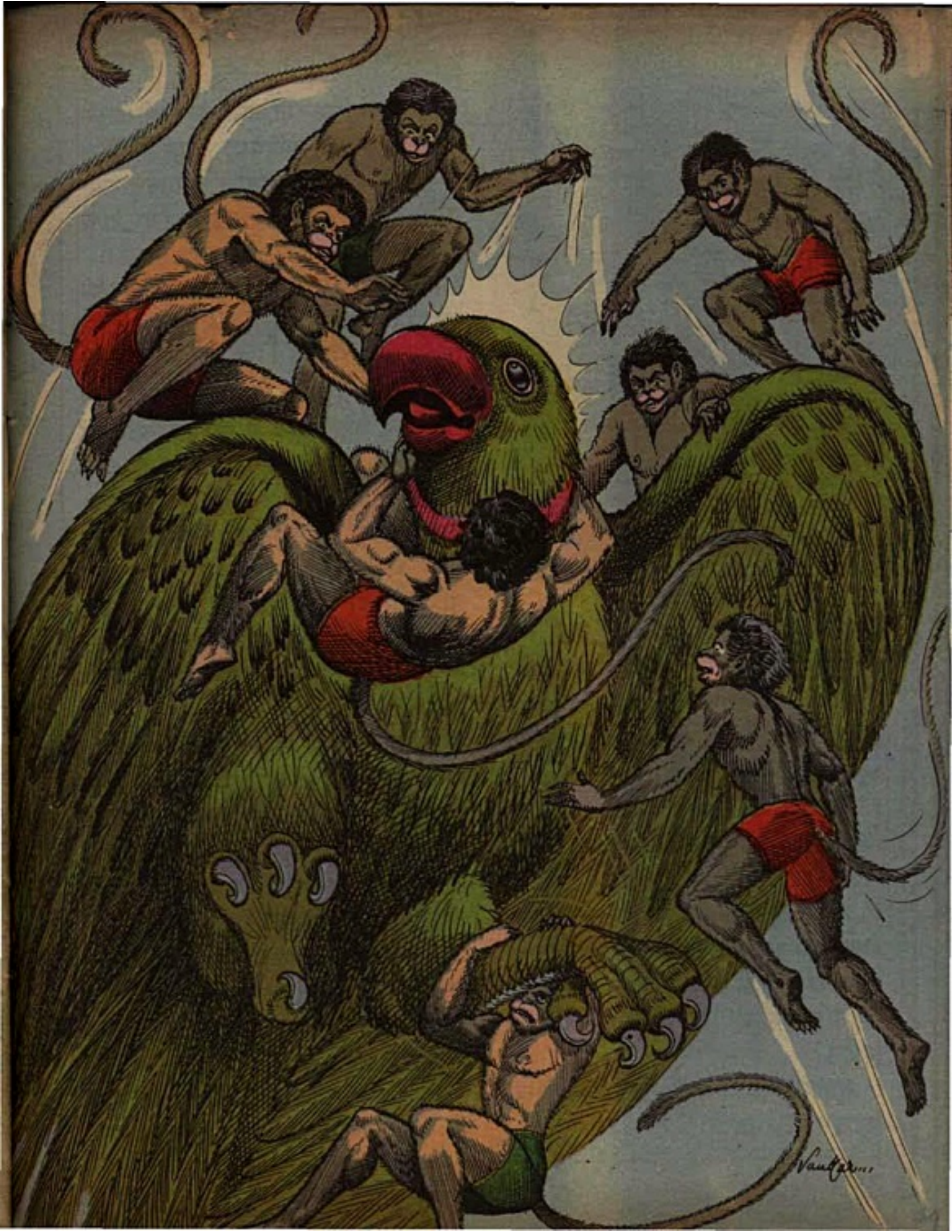
उसे धरती पर पटक दिया ।

शुक वहीं धरती पर पड़े-पड़े राम से बोला, "हे राम, क्या दूत के साथ ऐसा ही व्यवहार किया जाता है? ये वानर मुझे मारने पर तुले हुए हैं । इन्हें रोको ।"

राम दूब की शैया पर लेटे हुए थे । वह उठे और उन्होंने वानरों को रुकने के लिए कहा ।

इससे शुक को फिर उड़ने का अवसर मिल गया । वह अपने पर फड़फड़ाता हुआ आकाश में उठा और सुग्रीव को संबोधित करते हुए बोला, "मैं रावण से क्या कहूं, सुग्रीव?"

सुग्रीव ने रावण के लिए जो संदेश दिया, वह इस प्रकार था :

"तुम मेरे मित्र नहीं, तुमसे मैंने कभी किसी प्रकार का उपकार नहीं चाहा । राम मेरे मित्र हैं । तुम उनके शत्रु हो । तुम मेरे शत्रु वालि के मित्र थे । इस तरह तुम मेरे शत्रु ही शत्रु हो । यह तो तुम जानते ही हो कि वालि की कैसे मृत्यु हुई । अब तुम अपनी मृत्यु भी निकट ही समझो । मैं तुम्हें, तुम्हारे पुत्रों, तुम्हारे बंधु-बांधवों, तुम्हारे हिमायतियों, किसी को भी जीवित नहीं छोड़ूंगा । बहुत जल्द मैं विशाल सेना के साथ लंका में प्रवेश करूंगा और लंका की ईंट से ईंट बजा दूंगा । रावण के बाणों से तुम्हें इंद्र जैसे देवता भी नहीं बचा सकते । सीता का अपहरण करना कोई बहुत बड़ी वीरता नहीं थी । तुमने यह काम राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में किया, उनसे डरकर किया । उनके हाथों तुम्हारी मृत्यु निश्चित है ।"

सुग्रीव ने अभी अपना यह संदेश कहा ही था कि अंगद ने आगे बढ़कर शुक को रोका और सुग्रीव से कहा, "मुझे लगता है यह दूत नहीं है । हो सकता है यह रावण का कोई गुप्तचर ही हो, और हमारी सेनाओं की स्थिति का सर्वेक्षण कर रहा हो ।"

तुरंत सुग्रीव ने वानरों को आदेश दिया कि वे शुक को पकड़ लें । वानर उसी क्षण हवा में उड़े और उन्होंने शुक को अपने कब्जे में ले लिया ।

शुक बुरी तरह फड़फड़ाने लगा । वह पूरे जोर से चीख रहा था, "मेरे पंख टूट

गये। मेरी आंखें निकाल ली गयी हैं। मुझे कोई बचाओ।"

शुक की पुकार सुनकर राम आगे आये और उन्होंने शुक को वानरों के हाथों से छुड़ाया। फिर उन्होंने सागर को नमस्कार किया और पहले की तरह दूब की शैया पर लेट गये। उनका मुख सागर की ओर था। वह ऐसे ही तीन दिन और तीन रात लेटे रहे और सागर का ध्यान करते रहे। फिर भी सागर के दर्शन नहीं हुए। इस पर राम को गुस्सा आ गया। उनकी आंखें लाल अंगारे हो गयीं। उन्होंने लक्ष्मण को संबोधित करते हुए कहा, "यह सागर मेरे सामने क्यों नहीं आता?" इसे अपने पर इतना गर्व है! मैं अपने बाणों से इसके भीतर तूफान मचा दूंगा। लाओ मेरा धनुष-बाण मुझे दो।"

लक्ष्मण ने राम का धनुष और बाण उनके हाथ में थमा दिये। राम ने धनुष पर प्रत्यंचा खींची और वज्रायुध जैसे बाणों को समुद्र की ओर छोड़ दिया। जैसे ही बाण सागर के भीतर गये, वैसे ही वहां हलचल मच गयी। बड़ी ऊंची-ऊंची लहरें उठने लगीं। साथ ही भयानक धुआं भी उठने लगा।

राम और बाण छोड़ने को थे तो लक्ष्मण ने उन्हें रोका और कहा, "नहीं भैया, और नहीं, वरना तीनों लोक समाप्त हो जायेंगे।"

पर सागर का तो कहीं अता-पता ही न था। उधर राम का क्रोध अपने चरम पर पहुंच रहा था। बोले, "हे सागर, तुम मुझे नहीं जानते। मैं अपने बाणों से तुम्हें सुखाकर रेगिस्तान बना दूंगा। तुम्हें मेरे बल का कतई अंदाज़ नहीं। तुम अपनी मूर्खता के कारण न केवल स्वयं नष्ट हो जाओगे, बल्कि तुम्हारे भीतर रह रहे दानव भी नष्ट हो जायेंगे। मैं समझ सकता हूं कि कदाचित् तुम उन्हीं से अपनी मित्रता के कारण मेरे सामने नहीं आ रहे।"

इतना कहकर राम ने अपने धनुष पर ब्रह्मास्त्र रखा। वह प्रत्यंचा को अपने कान तक खींच कर उस अस्त्र को छोड़ने को ही थे कि आकाश और धरती गूंज उठे और पहाड़ कांपने लगे। एक बार तो ऐसे लगा जैसे चारों ओर अंधेरा छा गया हो। हवा की गति बहुत तेज़ हो गयी थी। सभी प्राणी आर्तनाद कर उठे थे। सागर भी एक योजन पीछे हट गया। यह सब देखकर राम ने

अपना अस्त्र चलाने का इरादा छोड़ दिया ।

इतने में सागर दूर बीच जल में दीख पड़ा । उसका शरीर वज्र की तरह प्रकाशमान था । उसके गले में दिव्य पुष्पमालाएं थीं । स्वर्ण आभूषणों से वह लदा हुआ थ । उसके साथ गंगा, सिंधु जैसी नदी-कन्याएं भी थीं ।

सागर सीधा राम के पास ही चला आया और हाथ जोड़ते हुए बोला, "हे राम, गहनता और गंभीरता मेरे सहज गुण हैं । अपने जल को रोक पाना मेरे वश का नहीं । मेरे वश में केवल इतना ही है कि मैं, जब तक आपकी सेनाएं इस अथाह जल को पार कर रही हों, उन्हें कोई खतरा उपस्थित न होने दूं । उन्हें जल का कोई भी प्राणी किसी प्रकार की कोई हानि न पहुंचा सके ।"

"फिर तो ठीक है, मैं आश्वस्त हूं ।" राम ने कहा, "पर यह बताओ कि मैं प्रत्यंचा पर चढ़े इस अस्त्र का कहां उपयोग करूं?"

"उस ओर उत्तर में एक प्रदेश है । वहां आभीर नाम के जीव रहते हैं । उन्हें हमेशा दुष्टता ही सूझती है । वे पाप-कार्यों में लगे रहते हैं । आप यह अस्त्र उन्हीं पर चलायें और उनका अंत कर दें ।" सागर ने राम से कहा ।

राम ने वैसा ही किया । वह अस्त्र जिस प्रदेश में गिरा था, वह समूचा नष्ट हो गया, और जिस स्थल पर वह गिरा था, वहां से पाताल गंगा फूट पड़ी । उसे व्रण-कूप नाम दिया गया ।

सागर ने राम से फिर कहा, "नल नाम का वानर विश्वकर्मा का पुत्र है । वह इस विशाल जल पर सेतु का निर्माण कर सकता है । और यह सेतु जल में न डूबे, इस का प्रबंध मैं करूंगा ।" और इन शब्दों के साथ सागर अदृश्य हो गया ।

उसी क्षण नल आगे आया और राम को संबोधित करते हुए बोला, "मैं आपके समक्ष उपस्थित हूं । मैं विश्वकर्मा का पुत्र हूं । मैं सेतु का निर्माण करूंगा । मुझे विश्वकर्मा से वरदान प्राप्त है । अब समय गंवाये बिना, इसी पल से यह काम शुरू हो जाना चाहिए । इस काम में मैं कुछ अन्य वानरों से भी सहायता लूंगा ।"

तीन प्रश्न

चंदन नाम के राज्य में सुगंधगिरि के निकट बहने वाली नदी शारदा से तीन कोस की दूरी पर गौरीपुर नाम का एक छोटा सा गाँव था। उस गाँव में रामशर्मा नाम का एक पंडित रहता था। अपनी गुज़र के लिए वह अपने चार बीघा खेत में खेती करता था।

रामशर्मा का एक रिश्तेदार था गौरीनाथ शास्त्री। वह वहां के राज्य का दरबारी पंडित था। इस कारण वह काफी घमंडी था।

एक बार वह रामशर्मा की बेटी के नामकरण के अवसर पर गौरीपुर आया। उसके साथ उसका परिवार भी था। उसकी पत्नी, पार्वती चाहती थी कि उनके बेटे, माधव, का रिश्ता रामशर्मा की बेटी के साथ कर दिया जाये।

गौरीनाथशास्त्री को तो अपने पर घमंड था ही। उसने रामशर्मा की फटेहाली पर दया दिखाते हुए कहा, "तुम राजधानी चले आना और राजा से कहना कि तुम गौरीनाथ शास्त्री, यानी मेरे, रिश्तेदार हो। तुम्हें दरबार में ज़रूर नौकरी मिल जायेगी।"

रामशर्मा को गौरीनाथशास्त्री का दया दिखाना अच्छा नहीं लगा। उसने कहा, "मुझ गरीब किसान को दरबारी पंडित के पद पर कौन बिठायेगा। उस पद पर तो आप जैसे, अपनी प्रतिभा बेचने वाले और उससे अपना पेट पालने वाले सत्कवि ही अच्छे लगते हैं।"

गौरीनाथशास्त्री को रामशर्मा का यह व्यंग्य-बाण बुरी तरह चुभ गया। तब से उसने उसके यहां जाना छोड़ दिया और इससे एक प्रकार से अपना नाता ही तोड़ लिया।

ऐसे ही सोलह-सत्रह वर्ष बीत गये। रामशर्मा की बेटी शारदा, सयानी हो चुकी थी। उन्हीं दिनों गौरीपुर के समीप कल्याण-

लक्ष्मी विद्या

दुर्ग में रामशर्मा के किसी रिश्तेदार के यहां शादी थी । रामशर्मा वहां सपरिवार पहुँचा था, और गौरीनाथशास्त्री की पत्नी भी वहां पहुँची हुई थी । रामशर्मा ने गौरीनाथशास्त्री को न देखकर उसके बारे में पूछताछ की ।

"वह नहीं आये हैं, समधी जी । मैं बेटे को लेकर यहां चली आयी हूं," गौरीनाथ शास्त्री की पत्नी, पार्वती ने कहा, फिर उसने अपने बेटे, माधव, को रामशर्मा का परिचय दिया । माधव ने रामशर्मा को झुककर प्रणाम किया ।

रामशर्मा के साथ उसकी पत्नी के अलावा उसकी पुत्री, शारदा, भी आयी हुई थी । शारदा को देखकर पार्वती बहुत प्रभावित हुई । उसने रामशर्मा से कहा, "समधी जी, शारदा को देखने के बाद तो मेरे मन में बार-बार यही उठ रहा है कि वह जल्दी जल्दी बहू बनकर हमारे घर आये ।"

पार्वती की बात सुनकर रामशर्मा और उसकी पत्नी बहुत खुश हुए । रामशर्मा ने कहा, "जो बात हमारे मुंह से निकलनी चाहिए थी वह आपके मुंह से निकली है । यह शुभ कार्य हो जाये तो इसे हम अपना सौभाग्य मानेंगे । लेकिन क्या यह प्रस्ताव गौरीनाथशास्त्री को स्वीकार होगा? बस, यहीं हमें थोड़ा संदेह है ।"

"आप उसकी चिंता मत कीजिए," पार्वती ने राहत की सांस लेते हुए कहा, । "मेरे ख्याल में उन्होंने उस दिन ही वह सब कुछ भुला दिया था । इसलिए आप शुभ मुहूर्त देखकर हमारे यहां पधारें और मेरे पति से कहें कि वह आपकी बेटी को अपनी बहू बना ले । अगर भगवान ने चाहा तो इससे हमारे दोनों परिवार फिर से एक डोरी में बंध जायेंगे ।"

कुछ दिन ऐसे ही बीत गये । एक दिन शुभ मुहूर्त देखकर रामशर्मा अपनी बेटी की शादी के बारे में बात करने राजधानी के लिए चल पड़ा । इस बीच पार्वती ने अपने पति गौरीनाथशास्त्री को सूचित कर दिया था कि रामशर्मा उनसे अपनी बेटी के बारे में बात करने किसी दिन भी आ सकता है ।

पत्नी की बात सुनकर गौरीनाथशास्त्री अपनी कुढन दबाते हुए बोला, "यह भी खूब

रही। आने दो उसे। लड़की मुझे पसंद आयेगी तो मैं अपनी स्वीकृति दूंगा।"

अपने पति के उत्तर पर पार्वती को कुछ अचंभा हुआ। उसे लगा कि उसका पति अपने अपमान का घाव भर नहीं पाया है।

खैर, जब रामशर्मा गौरीनाथशास्त्री के यहां पहुंचा तो गौरीनाथशास्त्री ने बात को इधर-उधर घुमाते हुए कहा, "अच्छा, कहां तक पढ़ी हुई है, तुम्हारी बेटी?"

रामशर्मा समझ गया कि गौरीनाथशास्त्री के स्वर में कुछ अवहेलना का पुट है। पर उसने उस ओर ध्यान नहीं दिया। बोला, "मेरे लिए यह ठीक नहीं होगा कि मैं अपनी बेटी की शिक्षा-दीक्षा के बारे में बात करूं। बस इतना ही कह सकता हूं कि मेरी बेटी ने अपना शारदा नाम सार्थक किया है।"

रामशर्मा का यह उत्तर पाकर गौरीनाथ शास्त्री आश्वस्त नहीं हुआ, बल्कि अपने स्वर में पहले जैसी अवहेलना बनाये रखते हुए बोला, "कौवे का बच्चा कौवे को बड़ा प्यारा होता है, यह तो सभी जानते हैं। खैर, अपनी होने वाली बहू की शिक्षा-दीक्षा की परीक्षा मैं स्वयं लूंगा।"

गौरीनाथशास्त्री की बात सुनकर रामशर्मा कुछ-कुछ परेशान दिखने लगा। फिर भी उसने हिम्मत हाथ से न जाने दी। उसने गौरीनाथशास्त्री को अपनी बेटी को देखने के लिए सपरिवार आमंत्रित किया। गौरीनाथ शास्त्री ने पंचांग देखकर कहा कि वह उनके यहां अमुक दिन आयेगा।

रामशर्मा ने उससे वायदा किया कि वह उस दिन उनके लिए गाड़ी भेजेगा। आखिर,
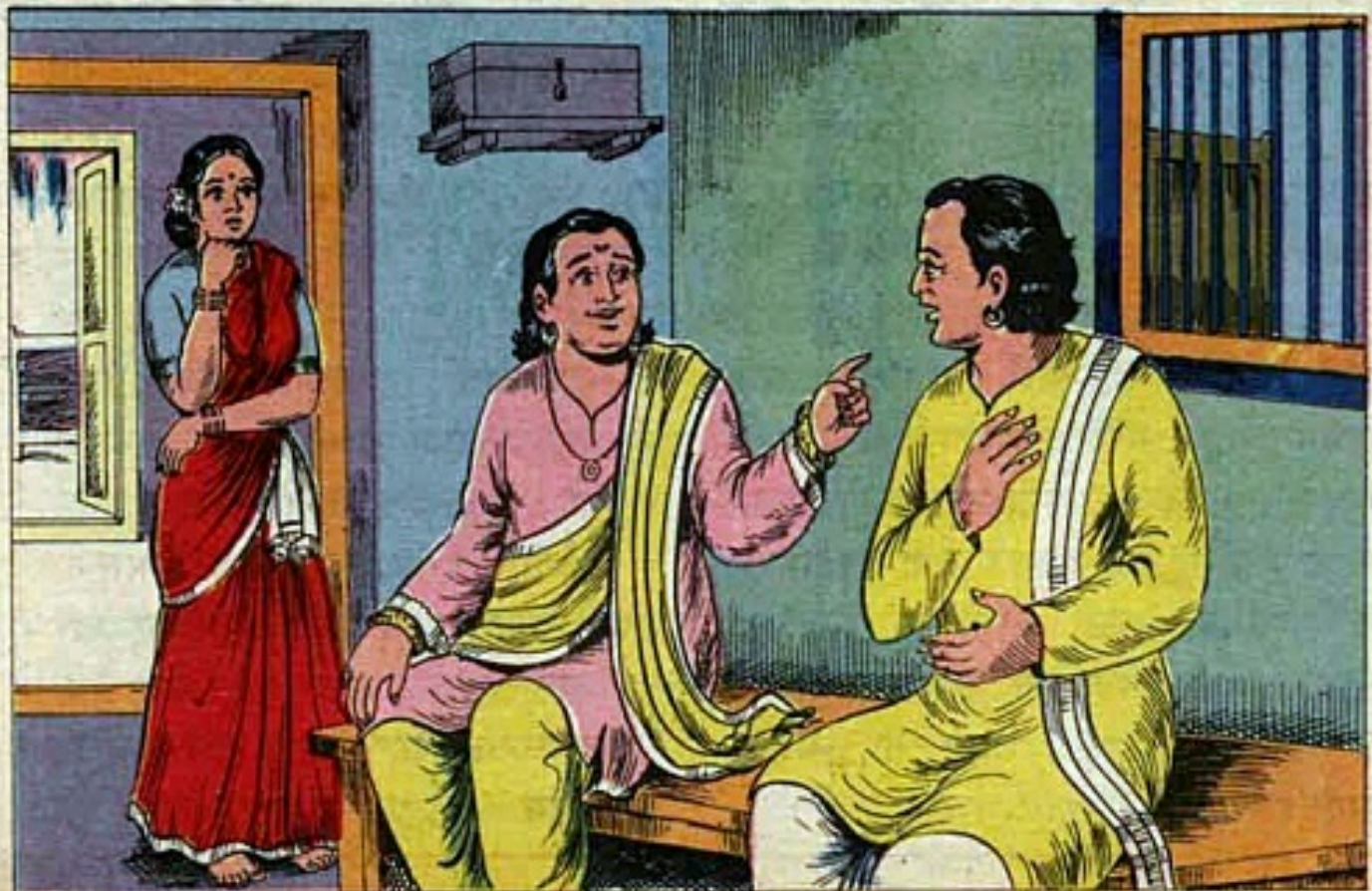
वह दिन भी आ ही गया और रामशर्मा ने गौरीनाथ के परिवार को लिवा लाने के लिए शारदा नदी के किनारे एक बैलगाड़ी भेज दी। गाड़ी के साथ रामशर्मा का एक संबंधी, गाड़ीवान, और रामशर्मा के घर में काम करने वाले नौकर का एक दस-वर्षीय बेटा भी था जिसका नाम अर्जुन था। अर्जुन काफी होशियार था, हर तरह से। गौरीनाथशास्त्री जब नाव से उतर कर अपनी पत्नी और पुत्र के साथ किनारे पर आया तो अर्जुन उनके गाड़ी में बैठने तक उनका सामान ढोता रहा और उन्हें अपनी बातों में उलझाये रहा। गौरीनाथशास्त्री अर्जुन से काफी प्रभावित हुआ और ध्यान से उसकी बातें सुनता रहा।

अचानक गौरीनाथशास्त्री के हाथ पर एक चींटी ने काट लिया। गौरीनाथशास्त्री के मुंह से आह निकली, और उसने चींटी को मसल दिया। फिर वह अर्जुन की ओर मुड़ा और उससे बोला, "अच्छा, यह तो बताओ, तुम्हारी छोटी मालकिन कहां तक पढ़ी हुई है?"

गौरीनाथशास्त्री का प्रश्न सुनकर वह दस-वर्षीय अर्जुन ठठाकर हंस पड़ा और कहने लगा, "मैं स्वयं छोटी मालकिन के पास पढ़ता हूं। अब मैं कैसे कह सकता हूं कि वह कहां तक पढ़ी हुई है? या कि वह पढ़ी-लिखी भी है कि नहीं!"

"अच्छा; अब पता चला! तुम अपनी छोटी मालकिन के चमचे हो! पर यह तो बताओ कि तुम कहां तक पढ़े हुए हो?" गौरीनाथशास्त्री ने यों ही एक प्रश्न उछाल दिया।

"मैं वह सब कुछ नहीं जानता, पर यदि आप चाहें तो मैं आपसे आसानी से कई सवाल पूछ सकता हूं।" अर्जुन ने अपनी मासूमियत दिखाते हुए कहा।

"खूब कही। तो तुम मेरी पढ़ाई-लिखाई की परीक्षा लोगे! ठीक है, पूछो। पर एक शर्त है," गौरीनाथशास्त्री बोला।

"कैसी शर्त? बताइए तो सही, हुजूर।" अर्जुन ने कुछ-कुछ व्यंग्य करते हुए कहा।

"शर्त यह कि अगर तुम जीत गये तो मैं मान लूंगा कि तुम्हारी छोटी मालकिन जीत गयी। अगर तुम हार गये तो समझ

लो, तुम्हारी छोटी मालकिन हार गयी । क्यों ठीक है न?" गौरीनाथशास्त्री ने उस बालक की ओर देखते हुए कहा ।

गौरीनाथशास्त्री और उस बालक के बीच चल रही बातचीत गाड़ी में बैठी पार्वती और उसका बेटा माधव भी सुन रहे थे । वे घबरा गये और उस घबराहट में एक दूसरे का मुंह देखने लगे । वे चाह रहे थे कि किसी तरह गौरीनाथशास्त्री को रोकें, लेकिन गौरीनाथशास्त्री ने उनकी रत्ती भर भी परवाह नहीं की । उसने अर्जुन से कहा, "चलो, पूछो अपने सवाल ।"

"ठीक है, मालिक, मैं आपसे केवल तीन ही सवाल पूछूंगा । अगर आप उनका उत्तर न दे पायें तो आपको अपनी हार स्वीकार करनी होगी ।" अर्जुन नेअपनी बात पर ज़ोर देते हुए कहा ।

गौरीनाथशास्त्री ने स्वीकृति में अपना सर हिला दिया ।

"पहला सवाल । बताइए, चींटियों का राक्षस कौन है?" अर्जुन ने पूछा ।

सवाल सुनकर गौरीनाथशास्त्री के होश उड़ गये । बोला, "यह भी कोई सवाल है? किसी कथा-कहानी से उठाया होगा ।"

"मालिक, यह किसी कथा-कहानी से नहीं उठाया गया ।" अर्जुन ने कहा, "आप इस पर थोड़ा सोचिए । आपको उत्तर मिल जायेगा । आप नहीं बता सकते तो साफ कह दीजिए । मैं ही आप को बता दूंगा ।"

गौरीनाथशास्त्री को आखिर कहना ही पड़ा, "मैं नहीं जानता, तुम ही बता दो ।"

तब अर्जुन ने उसे समझाते हुए कहा,
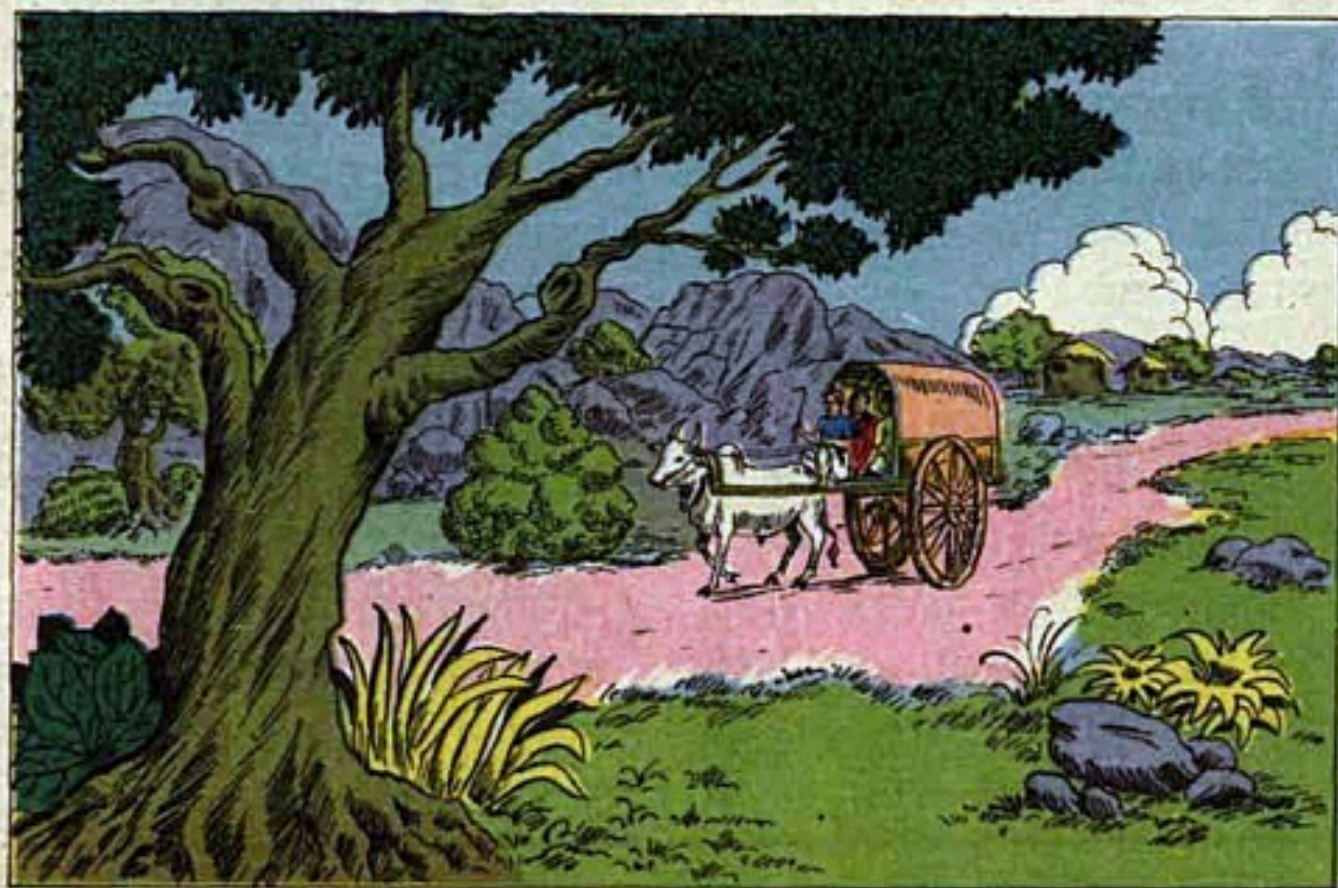
"चींटियों का राक्षस और कोई नहीं, आदमी ही है । अगर वह छोटी उंगली से भी चींटी को दबा दे तो वह मर जायेगी । इसलिए चींटियों का आदमी राक्षस ही हुआ न ।"

अर्जुन का उत्तर गौरीनाथशास्त्री को भा गया । उसने कहा, "ठीक है, अब तुम अपना दूसरा सवाल पूछो ।"

"आदमी को सबसे ज़्यादा किनकी ज़रूरत है?" अर्जुन ने पूछा ।

"ज्ञान और पांडित्य की ।" गौरीनाथशास्त्री ने झट से कहा ।

गौरीनाथशास्त्री का यह उत्तर पाकार अर्जुन हंस दिया । कहने लगा, "नहीं मालिक, होशियारी और व्यवहार कुशलता । मैं केवल अपनी इन दो विशेषताओं के बलबूते पर ही आप जैसे पंडित को हराने में सफल रहा । यह सच है कि नहीं?"

गौरीनाथशास्त्री को हां कहना पड़ा । अर्जुन की बातों से उसके मन पर जमी अहंकार की परतें उधड़ने लगीं ।

"अच्छा, अब आप मेरा तीसरा सवाल भी सुनिए । अपने सास-ससुर के प्रति बहू को किन बातों का ख्याल रखना चाहिए?" अर्जुन ने पूछा ।

"भय, भक्ति और गौरव," गौरीनाथ शास्त्री ने संदिग्धभाव से उत्तर दिया ।

"नहीं हुजूर, अविचलित स्नेह ।" अर्जुन फिर हंस दिया और बोला, "अगर सास-सुसर अच्छे होंगे तो बहू की भक्ति और गौरव सहज ही पा जायेंगे । लेकिन अगर बहू का स्नेह अपने सास-ससुर के प्रति अविचलित होगा तो भक्ति, भय और गौरव स्वयं ही चले आयेंगे । वह उनका भरपूर आदर करेगी । इसलिए मेरे विचार में तो अविचलित स्नेह ही अपेक्षित है ।"

अर्जुन के मुंह से ऐसी गंभीर बातें सुनकर गौरीनाथशास्त्री एकदम हतप्रभ रह गया । लेकिन उसकी पत्नी और बेटे को बहुत राहत मिली । उनके चेहरों पर सहज ही मुस्कराहट आ गयी ।

गौरीनाथशास्त्री ने अब अर्जुन से पूछा, "क्या ये सवाल तुम्हें तुम्हारी छोटी मालकिन ने सिखाये थे? ज़रूर उसी ने तुम्हें यहां भेज होगा ।"

अर्जुन पहले थोड़ा ठिठका, लेकिन फिर बोला, "नहीं मालिक, मेरी छोटी मालकिन ने तो मुझे केवल इतना ही सिखाया है कि सोचना किस तरह चाहिए । उसका कहना है कि यदि हम सोचना शुरू करेंगे तो सब बातें अपने आप समझ में आ जायेंगी । आप आ रहे हैं, यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई । उसने केवल इतना ही कहा था कि यह रिश्ता होने वाला नहीं है । इसीलिए मैंने अपना धैर्य बनाये रखा और बेधड़क आपसे अपने मन के सवाल कर दिये । इसमें छोटी मालकिन का कहीं हाथ नहीं है ।"

अब तक गाड़ी रामशर्मा के घर पर पहुंच चुकी थी । रामशर्मा उनकी अगवानी के लिए आगे बढ़ा और सबको आदर के साथ अपने घर के भीतर ले गया । फिर उसने अपनी बेटी शारदा को बुलाया । शारदा आयी और बड़े आदर से गौरीनाथशास्त्री दंपति को नमस्कार करके घर के भीतर के कमरे में चली गयी ।

सब लोग जब भोजन कर चुके तो रामशर्मा ने गौरीनाथशास्त्री से कहा, "शास्त्री जी, कहिए तो बेटी को फिर बुलवाऊँ?"

"किस लिए?" गौरीनाथशास्त्री ने पूछा ।

"आप मेरी बेटी की शिक्षा-दीक्षा के बारे में परीक्षा लेना चाहते थे न?" रामशर्मा ने टोह लेने के अंदाज़ में कहा ।

इस पर गौरीनाथशास्त्री ने हंसते हुए उत्तर दिया, "आप की बेटी की ओर से अर्जुन ने तीन सवाल करके मुझे हरा दिया है । इतना ही नहीं, उसने मुझे सोचना भी सिखा दिया है । अब मैं आपसे जो बात कह रहा हूँ, सोच-समझ कर ही कह रहा हूं । अब से आपकी बेटी हमारी बहू हुई । इसके लिए मेरी संपूर्ण स्वीकृति है । अब विवाह का मुहूर्त निकलवाना आपका काम है ।"

गौरीनाथशास्त्री का उत्तर सुनकर सबके चेहरे खिल उठे ।
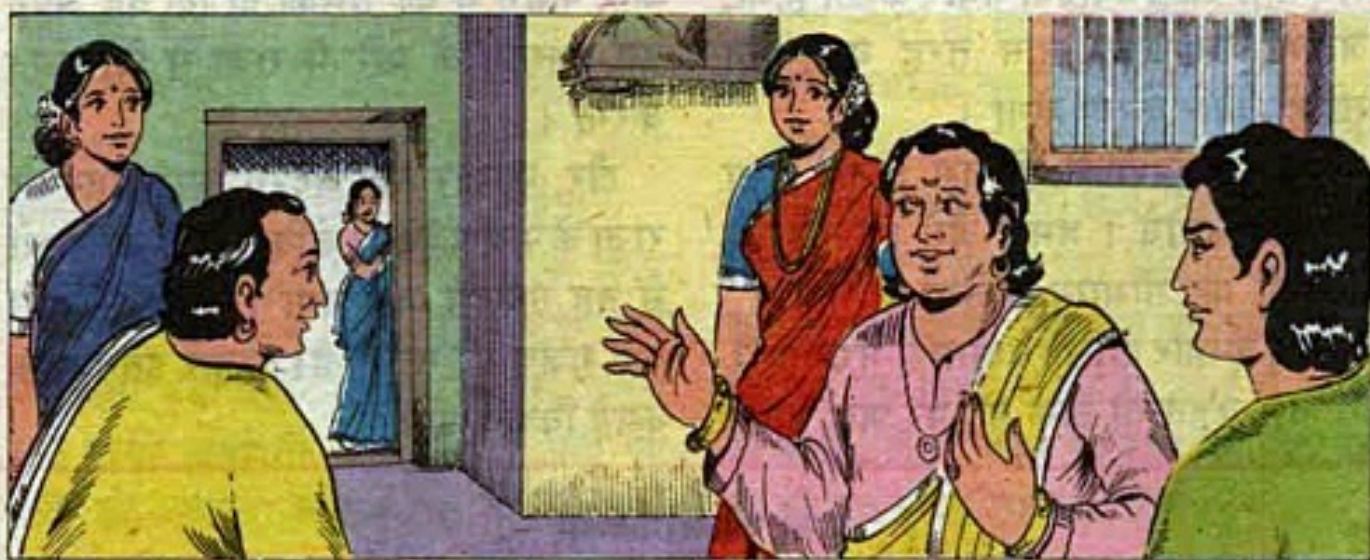
सफेद हाथी

उन दिनों आज के म्यामार और तब के बर्मा के एक छोटे से राज्य में होलांग नाम के एक राजा का राज था। उसकी राजधानी में क्वांग यू नाम का एक व्यक्ति रहता था जो मैले से मैले कपड़ों को धोकर चमका देता था।

एक रोज सुबह के वक्त क्वांग यू के यहां एक कुम्हार आया। वह मिट्टी के बर्तन बनाने में बहुत कुशल था। वह क्वांग यू से बोला, "राजा ने मुझे संदेश भिजवाया है कि रानी की तबीयत ठीक नहीं है। उसके लिए कुछ खास दवाइयां तैयार करनी होंगी, जिसके लिए एक खास तरह का बर्तन मुझे ही तैयार करना होगा।"

"बड़े भाग्यशाली हो तुम। तुम राजा के दर्शन करोगे। हमारे जैसे ऐरे-गैरे को तो कभी यह सौभाग्य मिलेगा ही नहीं।" क्वांग यू कुम्हार के लिए प्रशंसा से भर गया।

"तुम कहते तो ठीक हो, पर जब उनके यहां जाऊंगा तो मुझे बेहद साफ कपड़ों की ज़रूरत होगी। इस थैली में मेरे मैले कपड़े हैं। कल तक इन्हें बिलकुल उजले कर दो," कुम्हार ने कहा।

दोपहर के समय क्वांग यू ने कुम्हार के मैले कपड़ों को उबलते पानी में डाल दिया। वे कपड़े नीचे रंग के थे। उबाले जाने से उन्होंने अपना रंग छोड़ दिया।

अगले दिन जब कुम्हार आया तो वह एकदम ताड़ गया कि उसके कपड़ों का हुलिया बिगड़ चुका है। वह गुस्से से तमतमा गया और क्वांग यू को धमकी दी कि वह अपने इस नुक्सान के बारे में राजा से शिकायत करेगा।

खैर, कुम्हार वही बदरंग कपड़े पहनकर राजा के पास पहुंचा। लेकिन राजा की नजरों में वह एकदम जंच गया। बोला, "वाह! क्या ग़ज़ब की सफेदी है! तुम्हारे इतने साफ कपड़े किसने धोये?"

बर्मा की लोककथा

कुम्हार ने विनम्रता से उत्तर दिया, "राजन्, हमारे यहां क्वांग यू नाम का एक धोबी है । वह हर चीज को सफेद बना सकता है, चाहे वह चूहे की खाल ही क्यों न हो । आप एक सफेद हाथी चाह रहे थे न? आप एक हाथी उसके यहां भिजवा दीजिए । वह उसे सफेद कर देगा ।"

कुम्हार की बात सुनकर क्वांग यू को बुलवाने के लिए राजा ने सिपाहियों को भेजा । क्वांग यू जब राजा के सामने उपस्थित हुआ और राजा की फरमाइश सुनी तो उसे यह समझते देर न लगी कि उसे इस तरह संकट में डालने वाला बेशक वह कुम्हार ही है ।

स्थिति की नज़ाकत समझते हुए क्वांग यू राजा से बोला, "राजन्! एक हाथी तो क्या, आप इजाज़त दें तो मैं आपके हाथीखाने के सभी हाथियों को धोकर सफेद कर सकता हूं । लेकिन इसके लिए जैसे मुझे कपड़ों को उबालना पड़ता है, वैसे ही हाथियों को भी उबालना पड़ेगा । हाथी उबालने के लिए मुझे बड़े-बड़े हंडों की ज़रूरत पड़ेगी । यह काम वह कुम्हार, जो अभी-अभी यहां आया था, बड़ी अच्छी तरह कर सकता है । आप फौरन उसे अपना आदेश भिजवाइए ।"

राजा ने फौरन कुम्हार को बुलवा भेजा और उससे कहा, "कल सुबह तक मुझे एक ऐसा हंडा तैयार मिलना चाहिए जिसमें एक हाथी खड़ा हो सके । अगर नहीं ला पाये तो उसका अंजाम समझ लो-तुम्हें देश-निकाला दे दिया जायेगा ।"

कुम्हार समझ गया कि क्वांग यू ने स्थिति को बड़ी चालाकी से संभाल लिया है । रात भर वह मिट्टी ढोता रहा और उसे गीला करके रौंदता रहा । उसकी मदद के लिए उसके घर के सभी हाथ बंटा रहे थे ।

हंडा तैयार हो गया था, और सुबह-सुबह कुम्हार राजा के सामने उपस्थित हो गया ।

क्वांग यू ने उस हंडे में पानी डलवाया और उसके नीचे आग जलवा दी । फिर हाथीखाने से एक हाथी बुलवाया गया जिसे एक महावत हांकता हुआ लाया । महावत को आदेश हुआ कि वह उस हाथी को हंडे पर चढ़ा दे । जैसे ही हाथी हंडे पर चढ़ने को हुआ वह हंडा वैसे ही टूट कर टुकड़े-टुकड़े हो गया ।

राजा कुम्हार की ओर आंखें तरेरते हुए बोला, "अरे! तुम कुशल कारीगर बिलकुल नहीं हो। अब जाओ और सुबह होने से दो घड़ी पहले ही एक मज़बूत हंडा बनाकर लाओ, वरना तुम्हारा सर धड़ से अलग कर दिया जायेगा। जाओ! खबरदार!"

"ज़ी हुजूर," कुम्हार और कुछ न कह सका, और वहां से चला गया। लेकिन वह रातों-रात राज्य की सीमा को लांघ गया था।

राजा को जब इसकी खबर मिली तो उसका गुस्सा आसमान को छूने लगा।

क्वांग यू बोला, "प्रभु। आप हाथी को मेरे यहां भिजवा दीजिए। कल इसी वक्त इसे सफेद बनाकर मैं पेश करूंगा।"

उस रात क्वांग यू ने हाथी के साथ एक ज़ीना सटाया और उस पर चढ़कर उसने हाथी पर चूने की परत-दर-परत चढ़ानी शुरू की। हाथी अब पुतकर सफेद हो गया था।

अगले दिन जब उसने हाथी को राजा के सामने पेश किया तो राजा बहुत खुश हुआ। 'ओह! भगवान् ने मेरी इच्छा पूरी की। मैं भी अब सफेद हाथी का मालिक हो गया!' उसने मन ही मन अपने भाग्य को सराहा और क्वांग यू को उसने पुरस्कार के रूप में एक लाख अशरफियां और एक बढ़िया घोड़ा भेंट किया।

अशरफियां और घोड़ा लेकर क्वांग यू सीधे अपने घर गया। वहां उसने अपना बोरिया-बिस्तर बांधा और घोड़े पर सवार होकर संध्या होते-होते राज्य की सीमा पार करके एक नदी के किनारे जा पहुंचा।

वहां उसे फटे-पुराने कपड़ों में वही कुम्हार नज़र आया। वह नदी में मछलियां पकड़ रहा था। "अरे। तुम यहां हो?" क्वांग यू बोला, "तुम तो मुझे धूल चटाना चाहते थे! तुम्हारी यह हालत हो गयी है!"

क्वांग यू को देखकर कुम्हार घबरा गया, और उसी घबराहट में बोला, "यहां किसलिए आये हो? और तुम्हारे साथ यह घोड़ा कैसे?"

क्वांग यू ने उसे अब सब कुछ बता दिया और बोला "चलो हम नदी पार करके किसी दूसरे राज्य में चलें। अब हम एक दूसरे के दोस्त बनकर रहेंगे और अपना-अपना पेशा जारी रखेंगे।"

प्रकृति : रूप अनेक
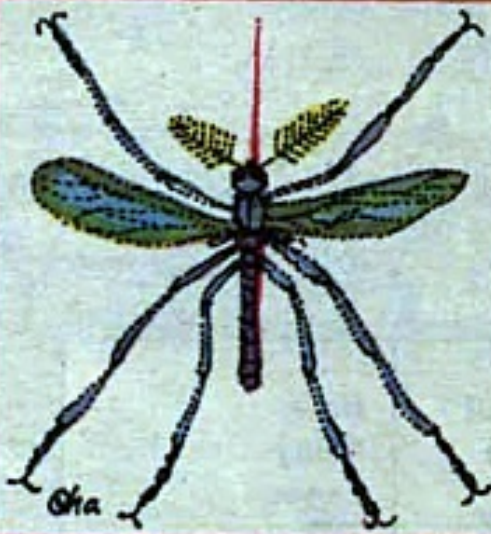
नन्हे, किंतु विकट प्राणी

दुनिया में ऐसा कौन सा व्यक्ति है जिसे मच्छर ने न काटा हो। तुम संसार के किसी भी भाग में चले जाओ, मच्छर के दर्शन वहां हो ही जायेंगे। उत्तरी कनाडा हो या साइबेरिया का अतिशीतल भूखंड, या फिर उत्तरी ध्रुव ही क्यों न हो, मच्छर सभी जगह फूलते-फलते मिलेंगे। गरम भूखंडों के बारे में तो कहना ही क्या। और जहां बराबर वर्षा होती रहती है, चाहे वे जंगल हों या मैदान, वहां मच्छरों का बोलबाला ही बोलबाला है। तोबा भली ऐसे विकट प्राणी से।

कीटों का संसार

प्राप्त रिकार्डों में धरती के लगभग १० लाख किस्म के प्राणियों का उल्लेख है। उनमें से लगभग ८ लाख किस्में तो छोटे कीड़ों या कीटों की हैं। यदि हम इन कीटों के नाम एकसाथ देना चाहें, तो उनसे ६ हजार साधारण पृष्ठों की एक पुस्तक तैयार हो जायेगी। और यदि हमने इन नामों को पढ़ना शुरू कर दिया तो हो सकता है जिस समय हम पढ़ना खत्म करें, उस समय तक कीटों की संख्या हजार गुना बढ़ गयी हो।
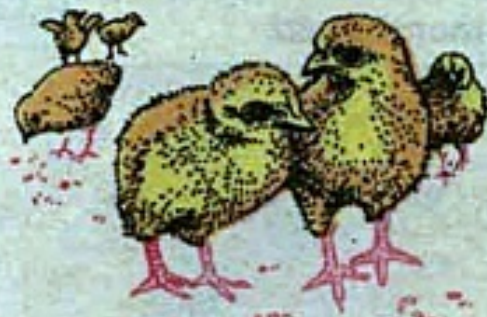
चूज़ों की गिनती

कहते हैं जब तक अंडे न सेये जायें, चूजों की गिनती नहीं करनी चाहिए। छोड़ो इस बात को। मान लिया कि अंडे सेये गये और चूज़े भी बाहर निकल आये, अब अगर हम उनकी गिनती करें तो? तो यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि दुनिया में एक-एक आदमी के पीछे एक-एक चूजा होता है। और हां, चूज़े को अंडे का छिलका तोड़कर बाहर निकलने में दो दिन, यानी लगभग ४८ घंटे लग जाते हैं।

PolioPlus

IMMUNIZATION AN ASSURANCE OF GOOD HEALTH TO CHILDREN

VACCINATIONS When and How Many

Age to Start Vaccination	Name of Vaccine	Name of Disease	How Many Times
Birth	BCG	Tuberculosis	Once
6 weeks	Polio	Polio	Three times with intervals of at least one month
6 weeks	DPT	Diphtheria Pertussis (Whooping Cough) Tetanus	Three times with intervals of at least one month
9 months	Measles	Measles	Once

Babies should receive all vaccinations by the time they are twelve months old.

Pregnant women should get themselves vaccinated against Tetanus (TT) twice—in an interval of at least one month—during the later stages of pregnancy.

HEALTHY CHILD—NATION'S HOPE & PRIDE

Design courtesy : World Health Organisation

फोटो परिचयांक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अप्रैल १९९२ के अंक में प्रकाशित की जाएंगी।

M. Natarajan

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० फरवरी '९२ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६

दिसंबर १९९१ की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो : हम चलते अपने धाम!

द्वितीय फोटो : यहाँ मेरा क्या काम?

प्रेषिका : कु. स्मिता शिरसाट, डी./२३६, शैलेन्द्रनगर, रायपुर-१

पुरस्कार की राशि रु. ५०/- इस महीने के अंत के पूर्व भेजी जाएगी।

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा
चांदोबा
चन्दामामा